वेद, यज्ञ तथा मन्त्र आदि असत्य बोलने वाले ब्राह्मणों में कभी शोभा नहीं दियाकरते हैं। इसलिये सदा सत्यही बोलना चाहिये।३६। व्यासजी ने कहा-हे तपोधन ! अब समस्त वर्णोंके तथा ब्राह्मणोंके तपस्याके फलका वर्णन कीजिये। मेरी पुनः एकबार सुननेकी इच्छाहोती है।३७। सनत्कुमार जी ने कहा-अब मैं समस्तकाम और अर्थका साधक और द्विजातियों द्वारा कठिनतासे करनेयोग्य तपके अध्यायका वर्णन करता हूँ। आपसब मुझसे श्रवण करिये।३८। तपको सबसे बड़ा बताया गया है, तपस्यासे ही विशेष फलकी प्राप्ति हुआ करती है,जो नित्यही तपश्चर्यासे अपनी प्रवृत्ति रखते हैं, वे देवताओं के सहित आनन्द का लाभ लिया करते हैं।३९। तपसे स्वर्ग मिलता है, तपहीसे यशकी प्राप्ति होती है,तपसे समस्त कामनाओंका लाभ होता है और तप ही सम्पूर्ण अर्थों का साधन होता।४०। तप से परम पुरुषार्थ मोक्ष की प्राप्ति होती है। तपसे ज्ञान तथा विज्ञान की सम्पत्ति मिलती है तपसे परम सौभाग्य और लोकोत्तर रूप-लावण्य प्राप्त होता है।४१। मनुष्य तपके द्वारा अनेक तरहकी वस्तुओं को पा लेता है, अधिक क्या-क्या बताया जावे तपका ऐसा विलक्षण प्रभाव है कि इसमें रत व्यक्ति मन से जो-जो भी इच्छा करता है सो उसे मिल जाता है।४२।

नातप्ततपसो यांति ब्रह्मलोकं कदाचन ।
नातप्ततपसा प्राप्यः शङ्करः परमेश्वरः ।।४३।।
यत्कार्यं किंचिदास्थाय पुरुषस्तपते तपः ।
तत्सव समवाप्नोति परत्रेह च मानवः ।।४४।
सुरापः परदारी च ब्रह्महा गुरुतल्पगः ।
तपसा तरते सर्व सर्वतश्च विमुच्यते ।।४५।।
अपि सर्वेश्वरः स्थाणुर्विष्णुश्चैव सनातनः ।
ब्रह्मा हुताशनः शक्रो ये चान्ये तपसान्विताः ।।४६।।
अष्टाशिति सहस्राणि मुनीनामूर्ध्वरेतसाम् ।
तपसा दिवि मोदन्ते समेता दैवतैः सह ।।४७।।
तपसा लभ्यते राज्यं स च शक्रः सुरेश्वरः ।

तपसाऽपालयत्सर्वमहन्यहनि वृत्रहा ॥४८॥
सूर्याचन्द्रमसौ देवौ सर्वलोकहिते रतौ ।
तपसैव प्रकाशन्ते नक्षत्राणि ग्रहास्तथा ॥४९॥

तपस्या के बिना न तो कभी ब्रह्म को पा सकते हैं और न परमेश्वर शिव ही प्राप्त किये जासकते हैं ।४३। मनुष्य जिस कार्य का उद्देश्य लेकर तप किया करता है वह सभी इसलोक और परलोक में अवश्य ही प्राप्त हो जाता है ।४२। मदिरा पान करने वाला, पराई स्त्री के साथ रमण करने वाला ब्रह्म-हत्यारा और गुरु-पत्नीसे गमन करने वाला महा पातकी भी तप से तर जाया करता है और समस्त प्रकार के पापों से छुटकारा पा जाता है ।४५। सबके स्वामी शिव, सनातन विष्णु, जगत्स्रष्टा ब्रह्मा, देवेन्द्र, इन्द्र, अग्नि आदि सब तपसे युक्त हैं ।४६। ऊर्ध्वरेता अट्ठासी सहस्र मुनिगण देवताओं के सहित सभी स्वर्ग लोक में तप से ही आनन्द करते हैं ।४७। तपके अतुल-असीम प्रभाव से राज्य की प्राप्ति होती है । तपसे सुरराज इन्द्र देव प्रति दिन सबका पालन किया करते हैं ।४८। समस्त लोकों के हित करने वाले सूर्य और चन्द्र देव, नक्षत्र, ग्रहादि सभी तप से ही नित्य प्रकाशित होते हैं ।४९।

न चास्ति तत्सुखं लोके यद्विना तपसा किल ।
तपसैव सुखं सर्वमिति वेदविदो विदुः ॥५०॥
ज्ञानं विज्ञानमारोग्य रूपवत्त्वं तथैव च ।
सौभाग्यं चैव तपसा प्राप्यते सर्वदा सुखम् ॥५१॥
तपसा सृज्यते विश्वं ब्रह्माविश्वं बिना श्रमम् ।
पाति विष्णुर्हरोऽप्येति धत्ते शेषोऽखिलां महीम् ॥५२॥
विश्वामित्रो गाधिसुतस्तपसैव महामुने ।
क्षत्रियोऽथाभवद्वि प्रः प्रसिद्धं त्रिभवे त्विदम् ॥५३॥
इत्युक्तं ते महाप्राज्ञ तपोमाहात्म्यमुत्तमम् ।
शृण्वध्ययनमाहात्म्यं तपसोऽधिकमुत्तमम् ॥५४॥

संसार में ऐसा कोईभी सुख नहीं है जो बिना तपके प्राप्तहोजाताहो । तपसे ही सब सुख मिलता है वेदके ज्ञाता ऐसा ही कहते हैं ।५०। तपस्यासे

ज्ञान-विज्ञान, आरोग्य, रूपवत्ता और सौभाग्य, सुखादि निरन्तर प्राप्त हुआ करते हैं।५१। तप से ब्रह्मा बिना किसी परिश्रम के संसार की विशाल रचना किया करते हैं, विष्णु इस महान् जगत्का रक्षण एवं पोषण करते हैं, शिव इस समस्त विश्व का संहार करते हैं और शेष इस भूमण्डल को धारण कियाकरते हैं।५२हे महामुने ! तपसेही गाधिके पुत्र विश्वामित्रजी ने क्षत्रिय जातिसे ब्राह्मणत्वको प्राप्तकिया और तीनोंलोकोंमें विख्यात होगये ।५३। हे महाप्राज्ञ! मैंने यह तपका उत्तम महात्म्य बतादिया, अब तप से अधिक श्रेष्ठ अध्ययनका माहात्म्य वर्णनकरताहूँ उसेआप श्रवण करें।५४।

पुराण माहात्म्य वर्णन

तपस्तपति योऽरण्ये वन्यमूलफलाशनः ।
योऽधीते ऋचमेकां हि फल स्यात्तत्समं मुने ॥ १ ॥
श्रुतेरध्यनात्पुण्यं यदाप्नोति द्विजोत्तमः ।
तदध्यापनतश्चापि द्विगुणं फलमश्नुते ॥ २ ॥
जगत्तथा निरालोकं जायतेऽशशिभास्करम् ।
बिना तथा पुराणं ह्यव्ययमस्मान्मुने सदा ॥ ३ ॥
तप्यमानं सदाज्ञानान्निरये योऽपि शास्त्रतः ।
सम्बोधयति लोकं तं तस्मात्पूज्यः पुराणग ॥ ४ ॥
सर्वेषां चैव पात्राणां मध्ये श्रेष्ठ पुराणवित् ।
पतनात्त्रायते यस्मात्तस्मात्पात्रमुदाहृतम् ॥ ५ ॥
यंबुद्धिर्न कर्तव्या पुराणज्ञ कदाचन ।
पुराणज्ञः सर्ववेत्ता ब्रह्मा विष्णुर्हरो गुरुः ॥ ६ ॥
धनं धान्यं हिरण्यं च वासांसि विविधानि च ।
देयं पुराणविज्ञाय परत्रेह च शर्मणे ॥ ७ ॥

श्री सनत्कुमारजी ने कहा-हे मुने ! वन में कन्द, मूल, फल खाकर तप करने के तुल्य एक वेद की ऋचा के पढ़ने का फल होता है ।१। श्रेष्ठ ब्राह्मण वेदके अध्ययनसे जो पुण्य प्राप्त करता है उसकेपाठ करनेसे दुगुना फल प्राप्त कियाकरता है ।२। हे मुने ! जिस तरह बिना दिवाकर औरचंद्र

के जगत् प्रकाशहीन रहता है, उसी तरह बिना पुराणके ज्ञानके यह सारा संसार प्रकाशशून्य-सा रहता है। अतः सदा पुराणों का अध्ययन अवश्य ही करना चाहिए ।३। सर्वदा अज्ञानसे परिपूर्ण लोक को शास्त्र के द्वारा ही समझा जाता है। पुराण अज्ञान का भली भाँति निराकरण कर देता है। इसलिये पुराणों का वक्ता सदा पूजा के योग्य होता है ।४। समस्त प्रकार के पात्रों के मध्य में पुराणों का ज्ञाता अत्यन्त श्रेष्ठ होता है। यह वस्तुतः पतनसे रक्षा किया करता है इसलिये इसे पात्र कहा जाता है ।५। पुराणों के ज्ञान रखने वाले ब्राह्मण में मनुष्य बुद्धि कभी नहीं करनी चाहिये, क्योंकि पुराणों का ज्ञानी विद्वान् सर्वज्ञ, ब्रह्मा, विष्णु, शिव गुरु होता है ।६। परलोक तथा इस लोक में अपने कल्याणके लिये पुराण के ज्ञाता विद्वानको धन धान्य, सुवर्ण और वस्त्रादि देने चाहिए ।७।

यो ददाति महीप्रीत्या पुराणज्ञाय सज्जनः ।
पात्राय शुभवस्तूनि स याति परमां गतिम् ॥ ८ ॥
महीं गावा स्यदनांश्च गजानश्वांश्च शोभनान् ।
यः प्रयच्छति पात्राय यस्य पुण्यफलं शृणु ॥ ९॥
अक्षयान्सर्वकामांश्च परत्रेह च जन्मनि ।
अश्वमेधफल चापि स फल लंभते पुमान् ॥१०॥
महीं ददाति यस्तस्मै कृष्टां फलवती शुभाम् ।
स तारयति वंश्यान्दश पूर्वान्दशापरान् ॥११॥
इह भुक्त्वाखिलान्कामानते दिव्यशरीरवान् ।
विमानेन च दिव्येन शिवलोकं स गच्छति ॥१२॥
न यज्ञैस्तुष्टिमायाति देवाः प्रोक्षणकैरपि ।
बलिभिः पुष्पपूजाभिर्यथा पुस्तकवाचनैः ॥१३॥
शभोरायतने यस्तु कारयेद्धर्मपुस्तकम् ।
विष्णोरर्कस्य कस्यापि शृणु तस्यापि तत्फलम् ॥१४॥
राजसूयाश्वमेधानां फलमाप्नोति मानवः ।
सूर्यलोकं च भित्वाशु ब्रह्मलोकं स गच्छति ॥१५॥

जो सत्पुरुष पुराणवेत्ता को जो कि सच्चा सुपात्र होता है, श्रेष्ठ पदार्थ सप्रेम अर्पण करता है वह परम गतिको प्राप्त कियाकरता है ।८। जो कोई उत्तम सुपात्रको भूमि,गौ,रथ,अश्व और शोभन हाथीदेता है उसके महापुण्य का फल यह है कि दातामनुष्य इस जन्ममें तथा परलोकमें अक्षय मनोरथों की प्राप्तिके साथ-साथ अश्वमेध यज्ञके पुण्यका फलभी प्राप्तकिया करता है ।९-१०। जो जुतीहुई सूफल देनेवाली भूमिका दानकरता है वह दश पहिले और दश अगले वंशजोंको तार दिया करता है ।११। इस जन्म में समस्त भोगोंका उपभोग करके अन्तमें सुन्दर शरीर धारण करके दिव्य विमानके द्वारा वह शिव लोकमें चला जाता है ।१२। सभी देव प्रोक्षणयुक्त यज्ञादि से तथा भेटोंसे और पुष्पादि उपचारों से, पूजा से इतने सन्तुष्ट नहीं होते जैसे कि पुराण-वाचनसे प्रसन्न होते हैं ।१३। शिवालय अथवा विष्णुदेवालय तथा सूर्य या अन्य किसीभी देव-मन्दिर में धर्म पुस्तक पुराण आदि का वचन जो कोई भी व्यक्ति करता है उसका फल यह होता है कि वह राजसूर्य तथा अश्वमेध यज्ञोंके पुण्यका फल प्राप्त करता है और सूर्यलोक का भेदन करके सम्त में ब्रह्मलोक को चला जाता है ।१४-१५।

स्थित्वा कल्पशतान्यत्र राजा भवति भूतले ।
भुंक्ते निष्कटक भोगा न्नात्र कार्या विचारणा ॥१६॥
अश्वमेधसहस्रस्य यत्फलं समुदाहृतम् ।
तत्फलं समवाप्नोति देवाग्रे यो जपं चरेत् ॥१७॥
इतिहासपुराणाभ्यां शम्भोरायतने शुभे ।
नान्यत्प्रीतकर शम्भोस्तथान्येषां दिवौकसाम् ॥१८॥
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन कार्यं पुस्तकवाचनम् ।
तथास्य श्रवण प्रेम्णा सवकामफलप्रदम् ॥ ९ ॥
पुराणश्रवणाच्छम्भोर्निष्पापो जायते नरः ।
भुक्त्वा भोगान्सुविपुलाच्छिवलोकमवाप्नुयाम् ।२०॥
राजसूयेन यत्पुण्यमग्निष्टोमशतेन च ।
तत्पुण्य लभते शभोः कथास्रवणमात्रतः ॥२१॥

वह व्यक्ति ब्रह्मलोकमें सैकड़ों कल्पोंतक निवास कर फिर पृथ्वी पर राजाहोता है और निष्कंटकरूपसे भोगोंका उपभोग किया करता है। इसमें तनिक भी सन्देहका कोई अवसरनहीं है ।१६। देव प्रतिमाके सामनेबैठकर जोकोई जाप करता है वहभी सैकड़ों अश्वमेधोंके फलके तुल्यही पुण्य का भागी होता है ।१७। शिवालयमें इतिहास पुराणों की गाथाके प्रवचन के बिना शिव तथा अन्यकिसी देवताको प्रसन्न एवं सन्तुष्टकरनेका अन्यकोई उपाय ही नहीं है ।१८। इसीलिए पूर्ण प्रयत्न से पुराण ग्रन्थों का वाचन तथा श्रवण हरएक कल्याणकामी को करना चाहिए, क्योंकि यह एक ही उपाय ऐसा जो समस्तकामनाओंकी पूर्ति करदेनेवालाहोता है ।१९। शिव पुराणश्रवण करनेसे मनुष्य पापरहितहोजाता है और समस्तभोगोंकोपाकर शिव लोकको जाता है ।२०। राजसूय यज्ञ से तथा सौ अग्निष्टोम यज्ञों के करनेसेजो पुण्य मिलता है वही पुण्य शिवकीकथा सुनने से होता है ।२१।

सव तीर्थावगाहेन गवां कोटिप्रदानतः ।
तत् फलं लभते शम्भोः कथाश्रवणतो मुने ॥२२॥
ये शृण्वन्ति कथां शम्भोः सदा भुवनपावनीम् ।
ते मनुष्या न मन्तव्या रुद्रा एव न संशयः ॥२३॥
शृण्वतां शिवसत्कीर्तिं सतां कीर्तयतां ताम् ।
पदाम्बुजांस्येव तीर्थानि मुनयो विदुः ॥२४॥
गतुं निःश्रेयप्तं स्थानं येऽभिवाँछन्ति देहिनः ।
कथां पौराणिकीं शैवीं भक्त्या शृण्वन्तु ते सदा ॥२५॥
कथां पौराणिकीं श्रोतुं यद्यशक्तः सदा भवेत् ।
नियतात्मा प्रतिदिन शृणुयाद्वा मुहुर्टकम् ॥२६॥
यदि प्रतिदिनं श्रोतुमशक्ता मानवी भवेत् ।
पुण्यमासादिषु मुने शृणुयाच्छांकरीं कथाम् ॥२७॥
शैवी कथां हि शृण्वानः पुरुषो हि मुनीश्वर ।
स निस्तरति संसारं दग्ध्वा कर्ममहाटवीम् ॥२८॥

हे मुने ! समस्त शुभ तीर्थोंमें स्नान से तथा करोड़ गोदानसे जो महा-पुण्यका उदयहोता है वही फल मनुष्य शिवकी गाथाके सुनने या बांचनेसे

प्राप्त कर लेता है ।२२। जो कोई लोक पावनी शिव-कथा सुनते हैं वेदर असल मनुष्य नहीं माने जाने चाहिए, किन्तु वे तो साक्षात् रुद्रही हैं— इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है ।२३। भगवान् शिव की सुन्दर कीर्त्ति का श्रवण करने वालों तथा कहने वालों के चरण की धूलि को मुनिगण ने पवित्र तीर्थ बताया है ।२४। जो मनुष्य किसी भी कल्याणकारण स्थान को प्राप्त करना चाहते हैं उन्हें चाहिए कि सदा नियम पूर्वक शिवपुराण की कथा का श्रवण या वाचन किया करें ।२५-२६। यदि सदा पुराण-कथा सुनने में किन्हीं कारणों से असमर्थ हों तो किसी पुण्य मास में एक बार अवश्य ही कथा का श्रवण करें ।२७। हे मुनीश्वर ! जो मनुष्य शिव कथा सुनते हैं वे अपने कर्म रूपी विशाल वन को भस्म करके संसार से तर जाते हैं ।२८।

कथां शंवीं मुहूर्तं वा तदर्द्धं वा क्षणं च वा ।
ये शृण्वंति नरा भक्त्या य तेषां दुर्गतिर्भवेत् ॥२९॥
यत्पुण्यं सर्वदानेषु सर्व्वयज्ञेषु वा मुने ।
शंभोः पुराणश्रवणात्तत्फलं निश्चल भवेत् ॥३०॥
विशेषतः कलौ व्यास पुराण श्रवणादृते ।
परो धर्मो न पुंसां हि मुक्तिध्यानपरः स्मृतः ॥३१॥
पुराणश्रवणं शंभोर्नामसंकीर्तनं तथा ।
कल्पद्रुमफलं रम्यं मनुष्याणां न संशयः ॥३२॥
कलौ दुर्मेधसां पुंसां धर्माचरोज्झितात्मनाम् ।
हिताय विदधे शंभुः पुराणाख्यं सुधारसम् ॥३३॥
एकोऽजरामरः स्याद्धं पिबन्नवामृतं पुमान् ।
शंभोः कथामृतापोनात्कुलमेवाजरामरम् ॥३४॥
या गतिः पुण्यशीलानां यज्विनां च तपस्विनाम् ।
सा गतिः सहसा तात पुराणश्रवणात्खलु ॥३५॥

जो पुरुष क्षणमात्र भी भक्तिपूर्वक शिवकी कथा सुनते हैं उनकी कभी भी दुर्गति नहीं होती है ।२९। हे मुने जो समस्त दानोंमें या सम्पूर्ण यज्ञों में पुण्य होता है वह फल भगवान् शिवके पुराणके सुननेमात्रसेही होजाता

है, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है ।३०। हे व्यासजी ! कलयुग में खास तौर से पुराण स्रवण के बिना मनुष्यों को मुक्ति दान में परायण अन्य कोई भी धर्म नहीं कहा गया है ।३१। मनुष्यके लिये शिवपुराणका स्रवण और नाम-संकीर्तन कल्पवृक्ष के फलके समान सुन्दर बताया गया है,इसमें कुछभी संशय नहीं है ।३२। इस कलियुग में धर्माचार के त्याग देने वाले दुर्बुद्धि मानवों के हितके लिये भगवान् शिवने अपने नाम वाला पुराण नामक अमृत रसका विधान किया है ।३३। अमृत के पान से केवल पान करने वाला एकही मानव अजर-अमर हो जाता है, किन्तु शिव-कथारूपी अमृत के पान करनेसे समृत के पान करने से समस्त कुलही अजर-अमर होता है ।३४। हे तात ! पुण्यात्माओं की तथा यज्ञकर्त्ता और तापसों की जो गतिहोती है वही गति एकबार पुराणके स्रवण करने से होती है ।३५

ज्ञानावाप्तिर्यदा न स्याद्योगशास्त्रःणि यत्नतः ।
अध्येतव्यानि पौराणं शास्त्र श्रोतव्यमेव च ।।३६।।
पापं संक्षीयते नित्य धर्मश्चव विवर्द्धते ।
पुराणस्रवणाज्ज्ञानी न संसारं प्रपद्यते ।।३७।।
अतएव पुराणानि स्रोतव्यानि प्रयत्नतः ।
धर्मार्थिकमलाभाय मोक्षमार्गप्तिये तथा ।।३८।।
यक्षैर्दानैस्तपोभिस्तु यत्फलं तीर्थसेवया ।
तत्फलं समवाप्नोति पुराणस्रवणान्नरः ।।३९।।
न भवेयुः पुराणानि धर्ममार्गेक्षणानि तु ।
यद्यत्र यद्व्रती स्थाता चात्र पारत्रिकीं कथाम् ।।४०।।
षडविंशतिपुराणानां मध्येऽप्येकं शृणोति यः ।
पठेद्वा भक्तियुक्तस्तु स मुक्तो नात्र संशयः ।।४१।।

अन्यो न दृष्टः सुखदा हि मार्गः पूराणमार्गो हि सदा वरिष्ठः ।
शास्त्रं बिना सर्वमिदं न भाति सूर्येण हीना इव जीवलोकाः ।४२।

ज्ञानकी प्राप्ति के अभावमें यत्न सहित योग-शास्त्रों को पढ़ना चाहिए और परायण शास्त्रोंका स्रवण करना चाहिये ।३६। पुराणके स्रवणसे पाप

छूटते हैं,धर्म नित्यबढ़ता है । उससे यहहोता है कि वह ज्ञानीहोकर संसार के आवागमनसे मुक्त होजाता है ।३७। इसीसे धर्म,अर्थ,काम एवं मोक्ष की प्राप्तिके लिये यत्नपूर्वक पुराणोंका श्रवण प्रत्येकको करना चाहिये ।३८। यज्ञ,दान, तप तथा तीर्थ सेवन से जो फल मिलता है वही पुराण श्रवण से मनुष्य प्राप्त कर लेता है ।३९। यदि धर्म के मार्ग दर्शक पुराण न होते तो इस लोक ओर परलोक की कथा सुनाने वाला कोई व्रती न रहता ।४०। छब्बीस पुराणों में किसी एक भी कोई श्रवण कर लेता है अथवा भक्ति के साथ पढ़ लेता है तो वह निस्सन्देह मुक्त हो जाता हैं ।४१। इसके अतिरिक्त अन्य कोई भी सुखप्रद मार्ग देखने में नहीं आता है । पुराण श्रवण का मार्ग ही परम श्रेष्ठ है । बिना शास्त्र के यह संसार भी इस तरह शोभायुक्त नहीं है, जिस प्रकार बिना सूर्य देव के यह जीव लोक शोभा नहीं पाया है ॥४२॥

किस पाप के फल से किस नरक में जाना पड़ता है तथा प्रायश्चित वर्णन

तेषां मूद्धोपपरिष्टाद्वै नरकास्ताञ्छृणुष्व च ।
मत्तो मुनिवरश्रेष्ठ पच्यन्ते यत्र पापिनः ॥ १ ॥
रौरवः शूकरो राधस्ताला विवमनस्तथा ।
महाज्वालस्तप्तकुम्भो लवणोऽपि विलोहितः ॥ २ ॥
वैतरणी पूयवहा कृमिणः कृमिभोजनः ।
असिपत्रवनं घोरं लालाभक्षश्च दारुणः ॥ ३ ॥
तथा पूयवहः प्रायो वहिर्ज्वालो ह्यधशिराः ।
सदशः कालसूत्रश्च तमश्चावीचिरोधनः ॥ ४ ॥
श्वभोजनोऽथ रुष्टश्च महारौरवशाल्मली ।
इत्याद्या बहवस्तत्र नरका दुःखदायकाः ॥ ५ ॥
पच्यते तेषु पुरुषाः पापकर्मरतास्तु ये ।
क्रमद्वक्ष्ये तु तान् व्यास सावधानतया शृणु ॥ ६ ॥

कूटसाक्ष्यं तु यो वक्ति विना विप्रान् सुराश्च गाः ।
सदाऽनृतंवदेद्यस्तु स नरो याति रौरवम् ॥ ७ ॥

श्री सनत्कुमारजीने कहा—हे मुनिश्रेष्ठ ! उन लोगोंके ऊपर जो नरक हैं उनका वृत्तान्त अब आप मुझसे श्रवणकरो जहाँपर पापात्माजीव जाकर दुःख भोगा करते हैं ।१। रौरव,शूकर, रोध,ताल तथा विवसन,महाज्वाल, तप्तकुम्भ,लवण विलोहित,वैतरणी,पूयवहा,कृमी-कृमि भोजन,घोर असिपत्र वन,दारुण, लालाभक्ष, पूयवह,बहिर्ज्वाल, अधश्शिर, सदश कालसूत्र, तमश्चावी, चिरोधन, श्वभोजन, रुष्ट,महारौरव,शाल्मि,इत्यादि वहाँ बहुत से परमदुःखदायक नरक हैं ।२-५। हे व्यासजी ! इन नरकोंमें जोभी पापात्मा पुरुषोंका पातनकियाजाता है मैं उनके विषयमें क्रमसे सबसुनाता हूं । आप सावधान चित्तसे श्रवणकरें ।६। जो मनुष्य बिना ब्राह्मण,बिना देवता और बिना गौ के कूटसाक्ष्य अर्थात् झूँठी गवाही देता है और सर्वथा मिथ्या बोलता है वह रौरव नामक नरक में डाला जाता है ॥७॥

भ्रूणहा स्वर्णहर्त्ता च गोरोधी विश्वघातकः ।
सुरापो ब्रह्महंता च परद्रव्यापहारकः ॥ ८ ॥
यस्तत्सङ्गी स वै याति मृतो व्यासगुरोर्वधात् ।
ततः कुम्भ स्वसुर्मातुर्गोश्चैव दुहितुस्तथा ॥ ९ ॥
साध्व्या विक्रय्यच्चाथ वार्द्धकी केशविक्रयी ।
तप्तलोहेषु पच्येत यश्च भक्तं परित्यजेत् ॥१०॥
अवमंता गुरूणां यः पश्चाद् भोक्ता नराधमः ।
देवदूषयिता चैव देवविक्रयिकश्च यः ॥११॥
अगम्यगामी यश्चान्ते याति सप्तबलं द्विज ।
चौरो गोघ्नो हि पतितो मर्यादादूषकस्तथा ॥१२॥
देवद्विजपितृद्वेष्टा रत्नदूषयिता च यः ।
स याति कृमिभक्ष वै कृमिमत्ति दुरिष्टकृत् ॥१३॥
पितृदेवसुरान् यस्तु पर्यश्नाति नराधमः ।
लालाभक्ष स य त्यज्यो यः शास्त्रवृटकृन्नरः ॥१४॥

जो भ्रूण हत्यारा, सुवर्ण चोर, विश्वासघातक, यज्ञपी, ब्रह्म हत्यारा परधनापहारी और गायको रोकनेवालाहोता है तथा हे व्यासजी!जाइनका सङ्ग-साथ देने वाला होता है ये सब और गुरुके वधकर्त्ता,बहिन,माता, गौ पुत्रीके वधकरने वाला तप्तकुम्भ नामक नरकमें जाते हैं।८-९।साध्वी स्त्री को बेच देनेवाला,व्याज खानेवाला,केशोंका बेचनेवाला और भक्तोंकात्याग करनेवाला ये सब 'तप्तलोह' नामक नरकमें जायाकरते हैं।१०।जो गुरुजन का तिरस्कार करने वाला पीछे भोजन करने वाला,मनुष्योंमें नीचदेवताओं को दूषित बताने वाला और जो देव प्रतिमाओंका विक्रय करनेवाला है,हे द्विज ! जो अगम्य स्त्रीमें गमनकरता है-ये सब तप्त बलके अन्तमें जाते हैं। चोर,गौ हत्या करने वाला, पतित, मर्यादा तोड़ने वाला,देव, ब्राह्मण और पितरोंसे द्वेषकरनेवाला और रत्नोंमें मेलमिलाप करनेवाला-ये सब कृमि-भक्ष नामक नरकमेंजाते हैं और वहाँ कीड़ोंको खाते हैं ।११-१३। जोनीच मनुष्य देवता, पितर, मनुष्य और अतिथियों के बिना स्वयं खाता है तथा शस्त्रकूट है, वह लालाभक्ष नामक नरक में जाता है ॥१४॥

अश्नंत्यजेन ससेव्यो ह्यसद्वाही तु यो दिजः ।
अयाज्ययाजकश्चैव तथैवाभक्ष्यभक्षकः ॥१५॥
रुधिरौघे पतंत्येते सोमविक्रयिणश्च ये ।
मधुहा ग्रामहा याति कूरां वैतरणी नदीम् ॥१६॥
नवयौवनमत्ताश्च मर्यादाभेदिनश्च ये ।
ते कृम्य यांत्यशौचाश्च कुलकाजीविनश्च ये ॥१७॥
असिपत्रवनं याति वृक्षच्छेदी वृथैव यः ।
क्षुरभ्रका मृगव्याधा वह्निजवाले पतंति तेः ॥१८॥
भ्रष्टाचारो हि यो विप्रः क्षत्रियो वैश्य एव च ।
यात्यंते दिज तत्रैव यः श्वकाकेषु वह्नियः ॥१९॥
व्रतस्य लोपका ये च स्वाश्रमादिच्युताश्च ये ।
संदशयातनामध्ये पतंति भृशदारुणे ॥२०॥

वीर्यं स्वप्नेषु स्कन्देयुर्ये नरा ब्रह्मचारिणः ।
पुत्रा नाध्यापिता यैश्च ते पतित श्वभोजने ॥२१॥

ब्राह्मण होकर अन्त्यज के साथ सेवन करने वाला दुर्जनों से ग्रहण करने वाला, बिना याचकों के यज्ञ कराने वाला तथा अभक्ष्य पदार्थों को खाने वाला सोमरसको बेचने वाला—ये सब रुधिरौघ नामक नरक में जाते हैं । मधुका हरण करने वाला, ग्राम की हत्या करने वाला—ये क्रूर वैतरणी नदी में जाया करते हैं ।१५-१६। जो अपने नये यौवन मे उन्मत्त होकर मर्यादा तोड़ने वाला अपवित्र हैं—जो स्त्री के द्वारा अपनी जीविका चलाते हैं वे सब कृम्य नामक वाले नरक में जाया करते हैं ।१७। वृथाही वृक्षों को काटने वाले जो होते हैं वे असिपत्रवन नामक नरक में जाते है । जो क्षरम्रक और मृग हिंसक व्याघ्र हैं वे वहिन-ज्वाला नाम वाले नरक मे जाते है ।१८। हे द्विज ! जो ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य अपने आचार से भ्रष्ट हैं श्वपाक में आग देने वाले हैं वे सब अन्तमें उक्त नरकों में जाया करते हैं ।१९। जो व्रत के लोप करने वाले तथा जो अपने आश्रम से भ्रष्ट है ये सब अति कठोर नामक तथा सदृश यातना में जाकर पड़ते हैं ।२०। जो ब्रह्मचारी मनुष्य स्वप्न में वीर्य को स्खलित करते हैं वे श्वभोजन नामक नरक में पड़ते हैं ।२१॥

एते चान्ये च नरकाः शतशोऽथ शहस्रशः ।
येषु दुष्कर्मकर्माणः पच्यते यातनागताः ॥२२॥
तथैव पापन्युक्तानि तथान्यनि सहस्रशः ।
भुज्यते यानि पुरुषैनरकांतरगोचरैः ॥२३॥
वर्णाश्रमविरुद्धं च कर्म कुर्वन्ति ये नराः ।
कर्मणा मनसा वाचा निरये तु पतन्ति ते ॥२४॥
अधःशिरोभिद्दृश्यन्ते नरका दिवि दैवतैः ।
देवानधामुखान्सर्वानधः पश्यन्ति नारकाः ॥२५॥
स्थावराः कृमिपाकाश्च पक्षिणः पशवो मृगाः ।
धार्मिकास्त्रिदशास्तद्वन्मोक्षिणश्च यथाक्रमम् ॥२६॥

यावंतो जंतवः स्वर्गे तावंतो नरकौकसः ।
पापकृद्याति नरकं प्रायश्चित्तपराङ्मुखः ॥२७॥
गुरूणि गुरुभिश्चैव लघूनि लघुभिस्तथा ।
प्रायश्चित्तानि ह्यन्येच मनुः स्वायम्भुवोऽब्रवीत् ॥२८॥

ये पूर्वोक्त तथा अन्य सैकड़ों एवं सहस्रों नरक हैं जिनमें पापात्मा मनुष्य यातना भोगने के लिये पटके जाते हैं ।२२। पापभी सहस्रों प्रकार के होते हैं । ये बताये गए तथा अन्यभी बहुतसे हैं जिनके कारण मनुष्य नरकों में पड़कर उनका फल भोगा करते हैं ।१२। जो मनुष्य मन, वाणी और कर्म से अपने वर्ण तथा आश्रम के विपरीत कर्म किया करते हैं वे निश्चय ही नरकगामी होते हैं ।२४। ऐसे नरकों में निवास करने वाले पुरुष देवों के द्वारा नीचेकी ओर मुख करके देखे जाते हैं और नरकवासी स्वयं नीचेकी ओर मुख करके देवों को देखा करते हैं ।२५। जिस तरह स्थावर कृमिपाक पक्षी मृग है इसी तरह क्रमसे वार्षिक स्वर्ग–मोक्ष वाले जीव हैं ।२६। जितने जीव-जन्तु स्वर्ग में रहते हैं ठीक उतने ही नरक में स्थित होते हैं । जो मनुष्य अपने किए हुए दुष्कर्मों का कोई भी प्रायश्चित शास्त्रानुसार नहीं किया करते हैं वे ही पापात्मा प्राणी नरक में जाया करते हैं ।२७। स्वायम्भुव मनुने तथा अन्य महर्षियों ने भी बड़े पापों के बड़े प्रायश्चित और छोटे-छोटे पाप कर्मों के छोटे प्रायश्चित बतलाये हैं ।२८।

यानि तेषामशेषाणां कर्माण्युक्तानि तेषु वै ।
प्रायश्चित्तमशेषेण हरानुस्मरणं परम् ॥२९॥
प्रायश्चित्तं तु यस्यैवं पापं पुंसः प्रजायते ।
कृते पापेऽनुतापोऽपि शिवसंस्मरणं परम् ॥३०॥
महेश्वरमवाप्नोति मध्याह्न दिषु संस्मरन् ।
प्रातर्निशि च सन्ध्यायां क्षीणपापो भवेन्नरः ॥३१॥
मुक्तिं प्रयाति स्वर्गं वा समस्तक्लेशसंक्षयम् ।
शिवस्य स्मरणादेव तस्य शंभोरुमापतेः ॥३२॥
पापास्तरायो विपेन्द्र जपहोमार्चनादि च ।
भवत्येव न कुत्रापि त्रैलोक्ये मुनिसत्तम ॥३३॥

महेश्वरे मतियस्य जपहोमार्चनादिषु ।
यत्पुण्प्र तत्कृत तेन देवेन्द्रत्वादिकं फलम् ॥३४॥
पुमान्न नरकं याति यः स्मरेद् भक्तितो मुने ।
अहर्निशं शिवं तस्मात्स क्षीणाशेषहातकः ॥३५॥

उनमें जितनेभी कर्म बतलाये हैं उन सभीके सम्पूर्ण प्रायश्चित भी हैं, किन्तु भगवान्शिवका स्मरणार्चनकरना समस्तप्रायश्चित्तोंसे बड़ा है । इसी रीतिसे जिसव्यक्तिको प्रायश्चितकरना है उसे पापकर्म कियेजानेका पश्चात्ताप करके शिवका स्मरण करना बतलाया गया है ।२९-३०। जो प्राणी प्रातःकालमें सन्धामें,रात्रिमें और मध्याह्नकेसमयमें किसीभी समयमें नित्य नियमसे भगवान्शिवका स्मरणकरता है वह समस्तपापोंसे विमुक्तहोजाता है ।३१। ऐसा दुष्कर्मकर्त्ता पापात्मा प्राणी उमेश्वर शिवके केवल स्मरणसे ही समस्त दुःखोंसे दूर होकर स्वर्ग या मोक्ष पदको पहुंच जाता है ।३२। विपेन्द्र ! हे मुनिवर ! त्रिभुवनों में कहींभी पापोंका प्रायस्चित जप, होम और अर्चन आदि कुछभी नहीं होते हैं और जिसकी बुद्धि शिवके चरणोंमें संलग्नहो उसको जप,होम अर्चनादिसे जो पुण्यमिलता है वह सबपुन्यऔर देवराजइन्द्रका पद फल प्राप्त करता है ।३३-३४। हे मुनिराज ! जो मनुष्य अहर्निश भक्तिपूर्वक शिवकास्मरण कियाकरता है वहकभी नरकगामीनहीं होता है, क्योंकि इससे ही वह पापरहित हो जाया करता है ॥३५॥

नरकस्वर्गसंज्ञायै पापपुण्यै द्विजोत्तम ।
दयोस्त्वेक तु दुःखायान्यत्सूखायोद्भवाय च ॥३६॥
तदेव पीयते भूत्वा पुनर्दुःखाय जायते ।
तस्माद् दुःखात्मकं नास्ति न किंचित्सुखात्मकम् ॥३७॥
मनसः पारणामोऽयं सुखदुःखोपलक्षणः ।
ज्ञानमेव परं ब्रह्मज्ञानं तत्वाय कल्पते ॥३८॥
ज्ञानात्मकामिद विश्वं सकलं सचराचरम् ।
परविज्ञानतः किंचिद्विद्यते न परं मुने ॥३९॥

हे द्विजोत्तम ! ये पाप और पुन्य ही नरक और स्वर्गके नामोंके अर्थ हैं । इन दोनों स्थानों में पाप दुःखोंके भोगके वास्ते और पुन्य सुखोपभोग

के लिये हुआ करते हैं ।३६।ऐसा भी होता है कि वही पुन्य प्राप्तिके लिये होकर फिर दुखके लिये भी हो जाता है। इस कारणसे न कुछ दुःख देने वाला है और कुछ सुख देनेवाला है ।३७। यह प्राणियोंके मनकापरिणाम ही दुःख-सुखका लक्षण होता है । इसलिये ज्ञान ही परब्रह्म का स्वरूप है और ज्ञानहीकी तत्वके लिये कल्पना की जाती है ।३८। हे मुनिवर ! यह चराचरात्मक समस्त संसार ज्ञानात्मक है परा विज्ञानसे अधिक अन्य कुछ भी नहीं है ॥३९॥

तप से शिव लोक की प्राप्ति तथा मनुष्य जन्म की श्रेष्ठता

सनत्कुमार सर्वज्ञ तत्प्राप्तिं वद सत्तम ।
यद्गत्वा न निवर्तन्ते शिवभक्तियुता नरः ॥ १ ॥
पराशरसुत व्यास शृणु प्रीत्या शुभां गतिम् ।
व्रतं हि शुद्धभक्तानां तथा शुद्धं तपस्विनाम् ॥ २ ॥
ये शिवं शुद्धकर्माणः सुशुद्धतपसान्विताः ।
समर्च्चयन्ति तं नित्यं वन्द्यास्ते सर्वथान्वहम् ॥ ३ ॥
नातप्ततपसो यांति शिवलोकमनामयम् ।
शिवानुग्रहसद्धेतुस्तप एव महामुने ॥ ४ ॥
तपसा दिवि भोगन्ते प्रत्यक्षं देवतागणः ।
ऋषयोमुनयश्चैव सत्यं जानीहि मद्वचः ॥ ५ ॥
सुदुर्द्धरं दुराध्यं सुधूरं दुरतिक्रमम् ।
तत्सर्वं तपसा साध्यं तपो हि दुरतिक्रमम् ॥ ६ ॥
सुस्थितस्तपसि ब्रह्मा नित्यं विष्णुर्हरस्तथा ।
देवा देव्योऽखिलाः प्राप्तस्तपसा दुर्लभं फलम् ॥ ७ ॥

श्री व्यासजीने कहा-हे सनत्कुमारजी ! अब आपकृपाकर उस पदकी प्राप्तिके विषयमें वर्णनकरें जहाँ प्राप्तहोकरश्रीशिवकी परम भक्तिमेंपरायण प्राणी नहीं लौटा करते हैं ।१। सनत्कुमारजीने कहा-हे पराशर पुत्र श्री व्यासजी ! अच्छा अब आप मुझसे वही शुभगति तथा शुद्ध एवं पवित्र भक्त और तपस्वियों के व्रतके विषयमें श्रवण करें।२। जो भी शुद्ध कर्मोवे

करने वाले तथा शुद्ध तपस्या में युक्त मनुष्य शिवका अर्चन किया करते हैं वे सर्वदा सभीके बन्दनीय और पूजा करने के योग्य होते हैं ।२। हे महामुने ! बिना तप किये नीरोग भी शिवलोक नहीं जाया करते हैं शिवकी कृपा भी तपश्चर्यासे बतलाईगई है ।४। आप सब मेरे इस कथनको सर्वथा सत्य समझें कि तपसे ही देवगण प्रत्यक्ष होकर स्वर्गमें आनन्दोपभोग किया करते हैं और तपश्चर्या से ही ऋषि-मुनि भी परमहर्षितहोते हैं ।५। जो सबसे कठिन, दुराराध्य और धुरधारी तथा अत्यन्त कठिनाई से अतिक्रमण करने के योग्य होता है, वह सब तपस्यासे साध्य हो जाता है किन्तु यह तपही एक परम दुस्साध्य वस्तु है ।६। इसी तपमें ब्रह्मा स्थित रहा करते हैं—तपमें ही विष्णु मग्न रहते हैं और तपस्या में शिव सदा प्रवृत्त रहते हैं तथा समस्त देवगण और देवियोंने भी तपके प्रभावसे ही दुर्लभ फलकी प्राप्ति की है ।।७।।

येन येन हि भावेन स्थित्वा यत्क्रियते तपः ।
ततः संप्राप्यतेऽसौ तैरिह लोके न संशयः ।। ८ ।।
सात्विकं राजसं चैव तामसं त्रिविध स्मृतम् ।
विज्ञेयं हि तपो व्यास नून हि सर्वसाधनम् ।। ९ ।।
सात्विकं दैवतानां हि यतीनामूर्ध्वरेतसाम् ।
राजसं दानवानां हि मनुष्याणां तथैव च ।।१०।।
त्रिविधं तत्फलं प्रोक्तं मुनिभिस्तत्वदर्शिभिः ।
जपो ध्यानं तु देवानामर्चनं भक्तिवः शुभम् ।।११।।
सात्विकं तद्धि निर्दिष्टमशेषफलसाधकम् ।
इह लोके परे चैव मनोभिप्रेतसाधनम् ।।१२।।
कामनाभलमुद्दिश्य राजसं तप उच्यते ।
निजदेह सुसंपीड्य देहशोषकदुःसहैः ।।१३।।
तपस्तामसमुद्दिष्टं मनोऽभिप्रेतसाधनम् ।।१४।।

यह तप जिस-जिस भावना से स्थित होकर किया जाता है वही फल इस लोकमें उन करने वालोंको निश्चय ही मिलता है । इस कथनमें संशय नहीं करना चाहिए ।८। हे व्यासजी ! यह तप सात्विक-राजस और तामस

तीन तरहका होता है। तपही सबका साधन है,देवगण तथा संन्यासियों का एवं ब्रह्मचारियों का तप सात्विक अर्थात् सतोगुणी होती है। दैत्य और मनुष्यों का तप राजस अर्थात् रजोगुणी होता है और राक्षस लोग तथा दुष्ट कर्म करने वालोंका तप तामस हुआ करता है।१०। तत्वदर्शी मुनियोने तप का फलभी तीन प्रकार का ही बतलाया है। जप-ध्यान और भक्ति के सहित देवताओं का अर्चनकरना यह सात्विकतप समस्त फलों का प्रदाता एवं साधक बतलाया गया है। यह इसलोकमें एवं परलोकमें मानवों की मनोकामनाओं का पूर्ण करने वाला होता है।११-१२। कामना के फलका उद्देश्य करके देह के शोषक तपस्या से जो शरीर को पीड़ित किया जाता है वह राजस तपकहा गया है।१३। जो केवल अपने मनोरथों की सिद्धि के लिए ही तप किया जाता है वह तामस तप कहा जाता है।१४।

उत्तमं सात्विकं विद्याद्धर्मबुद्धिश्च निश्चला।
स्नान पूजा जपो होमः शुद्धशौचमहिंसनम् ॥१५॥
व्रतोपवासचर्या च मौनमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दानं क्षांतिर्दमो दया ॥१६॥
वापीकुपतड़ागादेः प्रासादस्य च कल्पना।
कृच्छ्र चान्द्रायणं यज्ञः सुतीर्थान्याश्रमाः पुनः ॥१७॥
धर्मस्थानानि चैतानि सुखदानि मनीषिणाम्।
सुधर्मः परमोः व्यास शिवभक्तेश्च कारणम् ॥१८॥
सक्रांतिविषवद्योगो नादमुक्ते नियुज्वताम्।
ध्यानं त्रैकालिकं ज्योतिरुन्मनीभावधारणा ॥१९॥
रेचकः पूरकः कुम्भः प्राणायामस्त्रिधा स्मृतः।
नाडीसंचारविज्ञानं प्रत्याहारनिरोधनम् ॥२०॥
तुरीयं तदधो बुद्धिरणिमाद्यष्टसंयुतम्।
पूर्वोत्तमं समुद्दिष्टं परज्ञानप्रसाधनम् ॥२१॥

सात्विक तप सबसे उत्तम तप समझना चाहिए। इसमें निश्चय धर्म की बुद्धि,स्नान पूजा, जप, होम,शुद्धि शौच, अहिंसा ये होते हैं।१५। इस

तप में व्रत, उपवासचार्या, मौन, इन्द्रिय,निरोध,बुद्धि,विद्या,सत्य,अक्रोध, दान,शान्ति,दम और दया का भाव होता है ।१६। सात्विक तपमें बावड़ी कूप, सरोवर एवं महल आदिका निर्माण, कृच्छ्र चान्द्रायण, यज्ञ, श्रेष्ठ तीर्थोंका अटन और आश्रय करना होता है ।१७। हे व्यासजी ! ये सब धर्म के स्थान हैं, बुद्धिमानोंको सुख देने वाले और शिवकी भक्तिके कारण स्वरूप होते हैं १८। संक्रान्ति विषुवत् योग नादयुक्त हमें प्रयोग करना चाहिए, तीनों कालोंमें ध्यान,ज्योति,उन्मनी-भाव यह धारण कही जाती है ।१९ रेचक, पूरक और कुम्भक ये तीन प्रकार का प्राणायाम कहा जाता है । नाड़ी सञ्चारका ज्ञानकरना तथा प्रत्याहारका रोकनाहोता है २०। चतुर्थ अणिमा आदि आठ सिद्धियोंके सहित अधोबुद्धि करना यह पूर्ति, पर- ज्ञ नका साधन बताया गया है । २१।।

काष्ठावस्था मृतावस्था हरिता वेति कीर्तिताः ।
नानोपलब्धयो ह्येताः सर्वपापप्रणाशनाः ।।२२।।
नारी शय्या तथा पानं वस्त्रधूपविलेपनम् ।
ताम्बूलभक्षणं पंच राजेश्वर्यविभूतयः ।।२३।।
हेमभारस्तथा ताम्रं गृहाश्च रत्नधेनवः ।
पाण्डित्यं वेदशास्त्राणां गीतनृत्य विभूषणम् ।।२४।।
शङ्खवीणामृदङ्गाश्च गजेन्द्रश्छत्रचामरे ।
भोगरूपाणि चैतानि एभिः सन्कोऽनुरज्यते ।।२५।।
आदर्शवन्मने स्नेहैस्तिलत्रय न पीड्यते ।
अर गच्छेति च ध्येनं कुरुते ज्ञानमोहितः ।।२६।
जानन्न हि संसारे भ्रमते घटियन्त्रवत् ।
सर्वयोनिषु दुखार्तः स्थावरेषु चरेषु च ।।२७।।
एवं योनिषु सर्वासु प्रतिक्रम्य भ्रमेण तु ।
कालांतरवशाद्यात मानुष्यमतिदुर्लभम् ।२८।।

काष्ठावस्था,मृतावस्था और हरितावस्था ये तीन अवस्थायें कही गयी है । ये अनेक तरहकी उपलब्धियाँ और समस्त पापोंको नाश करने वाली

होती है ।२२। नारी-शय्या-पान-वस्त्र-धूप-लेपन और ताम्बूल भक्षण-ये पाँच राजैश्वर्य विभूतियाँ होती हैं ।२३। हेम भार-ताम्र-गृह-रत्न-धेनु-वेद-शास्त्रोक्त पाण्डित्य-गीत-नृत्य-आभूषण-शंख-वीणा-मृदंग-गजेन्द्र-छत्र-चामर ये सब उपादान भोगस्वरूप हैं । इनमें आरक्तहुआ मानव अनुरागको प्राप्त होजाया करता है ।२४-२५। हे मुनिवर ! जो संसारी प्राणी हैं वे दर्पणके तुल्य तथा तेलके तिलोंकी भाँति पेरेजाते हैं । भ्रमणको प्राप्तहोकर इनको ज्ञानसे मोहित करता है ।२६। सब कुछ ज्ञान रखता हुआ भी इस संसारमें घड़ीके यन्त्रके समान भ्रमण किया करता है और स्थावर एवं चर स्वरूप समस्त योनियोंमें परम दुःखित होकर विचरण करता रहता है ।२७। इस तरह समस्त योनियों में पर्यटन करके कालान्तर में जाकर कहीं उसे यह मनुष्य योनि प्राप्त हुआ करती है । यह मानव-जन्मका प्राप्तकरना अत्यन्त दुर्लभ होता है ।२८।

व्युत्क्रमेणापि मानुष्यं प्राप्यते पुण्यगौरवात् ।
विचित्रा गतयः प्रोक्ताः कर्मणां गुरुलाघवात् ॥२९॥
मानुष्यं च समासाद्य स्वर्गमोक्षप्रसाधनम् ।
न चरत्यामनः श्रेयः स मृतः शोचते चिरम् ।३०।
देवासुराणां सर्वेषां मानुष्यं चातिदुर्लभम् ।
तत्संप्राप्य तथा कुर्यान्न गच्छेन्नरकं यथा ।३१।
स्वर्गाग्वगलाभाय यदि नास्ति समुद्यमः ।
दुर्लभं प्राप्य मानुष्यं वृथा तज्जन्म कीर्तितम् ।३२।
सर्वस्य मूलं मानुष्यं चतुवर्गस्य कीर्तितम् ।
संप्राप्य धर्मतो व्यास तद्यत्नादनुपालयेत् ।३३।
धर्ममूलं हि मानुष्यं लब्ध्वा सर्वार्थसाधकम् ।
यदि लाभाय यत्नः स्यान्मूलं रक्षेत्स्वय ततः ।३४।
मानुष्येऽपि च विप्रत्वं यः प्राप्य खलु दुर्लभम् ।
नाचरत्यात्मनः श्रेयः कोऽन्यस्तमादचेतनः ।३५।

व्युत्क्रम से भी पुण्य की गुरुता से यह मानव-जन्म प्राप्त किया जाता

है। कर्मोंके बड़ेहोने तथा छोटेपनकी अत्यन्त अद्भुतगति बतलाई गई है। ।२९। जो जीवात्मा स्वर्ग प्राप्ति तथा मोक्ष के साधक इस अत्यन्त दुर्लभ मानव शरीरमें जन्मपाकर भी अपने कल्याणकारक कर्म नहीं कियाकरता है वह मृत्युके पश्चात् बहुत समय तक शोक एवं चिन्तामें डूबा रहता है ।३ समस्त देवगण और असुरोंमें भी यह मनुष्यशरीरका जन्मपरदुर्लभ होता है। इस मानवशरीरको सौभाग्यसे प्राप्तकरके ऐसाही करना चाहिये जिससे नरकों में गमन न करना पड़े ।६१। यदि इस परम दुर्लभ मनुष्य के जन्मका लाभ प्राप्तकरके भी स्वर्ग तथा अपवर्गकी प्राप्तिकेलिए कुछ उद्योग नहींकिया जावे तो यह मानव-जन्मही व्यर्थ समझनाचाहिए ।३२। हे व्यासजी ! समस्त धर्म-अर्थ, काम और मोक्षका आदिकारण मनुष्य योनि में जन्म ग्रहण करना ही बतलाया गया है। इसलिये इस प्राप्तकरके अवश्यही धार्मिक-पद्धति से यत्नपूर्वक इसका यथोचित उपयोग करतेहुए पालन करना चाहिए ।३३। यदि समस्त पदार्थोंके साधन स्वरूप एवं धर्मकेपालक तथा मूलभूत मनुष्य के जन्मको प्राप्तकर अपने लाभके लिये यत्न किया जावे तो स्वयं मूलकी रक्षा होजावे ।३४ इस मानव जन्म में भी ब्राह्मण का शरीर प्राप्त करना महान् दुर्लभ होता है। इसे पाकर भी जो अपने कल्याण कारक कर्म नहीं किया करता है उससे अधिक मूढ़ एवं जड़ और कौन होगा ? ॥३४॥

द्वीपानामेव सर्वेषां कर्मभूरियमुच्यते ।
इतः स्वर्गश्च मोक्षश्च प्राप्यते समुपार्जितः ॥३६॥
देशेऽस्मिन्भारते वर्षे प्राप्य मानुष्यमध्रुवम् ।
न कुर्यादात्मनः श्रेयस्तेनात्मा खलु वांचितः ॥३७॥
कर्मभूमिरियं विप्र फलभूमिरसौ स्मृता ।
इह यत्क्रियते कर्म स्वर्गे तदनुभुज्यते ॥३८॥
यावत्स्वास्थ्य शरीरस्य तावद्धर्मं समाचरेत् ।
अस्वस्थश्चादृताऽप्यर्थं किंचित्कर्तुमुत्सहेत् ॥३९॥
अध्रुवेण शरीरेण ध्रुवं यो न प्रसाधनेत् ।
ध्रुवं तस्य परिभ्रष्टमध्रुवं नष्टमेव च ॥४०॥

आयुषः खंडखंडानि निपतंति तदग्रतः ।
अहोनात्रोपदेशेन किमर्थं नावबुध्यते ॥४१॥
यदा न ज्ञायते मृत्यु. कदा कस्य भविष्यति ।
आकस्मिके हि मरणे धृतिं विंदति कस्तथा ॥४२॥

समस्त द्वीपों में इस भूमि को कर्म करने का क्षेत्र बतलायागया है । यहाँ पर स्वर्ग और मोक्ष का अर्जन कियाजाता है।३६। इस भारववर्ष में इस अति अस्थिर मानव शरीर को प्राप्त कर यदि अपना कल्याण नहीं किया जाता है तो यही कहनाचाहिए कि निश्चितरूपसे उसनेअपनी आत्मा को वञ्चित किया है ।३७। हे विप्र ! यह कर्मभूमि बतलाई गई है और यही फलभूमि भी बताई गई है । यहाँ पर जो सत्कर्म किया जाता है वह स्वर्ग में जाकर भोगा जाया करता है ३७।जब तक यह सत्कर्म का साधन भूत शरीर स्वस्थता प्राप्ति किये हुए रहे तभी तक धर्म के कृत्य करे, क्योंकि स्वस्थताके अभाव में औरों की प्रेरणाप्राप्त करतेहुयेभी फिर कुछ भी नहीं कर सकता है और अस्वस्थ शरीर में कोई भी उत्साह शेष नहीं रहा करता है ।३८। जो मनुष्य इस अनिश्चित क्षण.भंगुर शरीर के द्वारा परम स्थिर एवं निश्चल धर्म की सिद्ध नहीं करता है उसका ध्रुव धर्म तो नष्ट हो ही जाता है और अध्रुव यह शरीर है वह तो निश्चय ही नष्ट होने वाला होता ही है ।४०। इस मानव शरीर की आयु के खण्ड २ होकर यों ही उसके आगे नष्ट होते चले जाते हैं । दिन और रात सदा उपदेश दे रहे हैं फिर भी नहीं जगते है ।४१। जब कि यह नहीं ज्ञात रहता है कि कब किसकी मृत्यु होती है फिर अचानक मृत्यु हो जाने पर कौन ऐश्वर्य की खोज करता है ।४२।

परित्यज्य यदा सर्वमेकाकी यास्यति ध्रुवम् ।
न ददाति कदा कस्मात्पाथेयार्थमिदं धनम् ॥४३॥
गृहीतदानपाथेयः सुख याति यमालयम् ।
अन्यथा क्लिश्यते जंतुः पाथेयरहिते पथि । ४४॥
येषां कालेय पुण्य नि परिपूर्णानि सर्वतः ।

गच्छतां स्वर्गदेशं हि तेषां लाभः पदे पदे ।४५।
इति ज्ञात्वा नरः पुण्यं कुर्यात्पापं विवर्जयेत् ।
पुण्येन याति देवत्वमपुण्यो नरकं व्रजेत् ।४६।
ये मनागपि देवेश प्रपन्ना शरणं शिवम् ।
तेऽपि घोरं न पश्यति यमं न नरकं तथा ।४७।
किंतु पापैर्महामोहैः किंचित्काले शिवाज्ञया ।
वसंति तत्र मानुष्यास्ततो यान्ति शिवास्पदम् ।४८।
ये पुनः सर्वभावेन प्रतिपन्नाः महेश्वरम् ।
न ते लिम्पन्ति पापेन पद्मपत्रमिवाम्भसा ।४९।

मृत्यु के प्राप्त होने पर प्राणी अपने समस्त धनादि वैभव को यहीं त्याग करके अकेला निश्चय ही चला जायेगा तो फिर मार्गमेंअपने पाथेय के लिये धनका दान क्योंनहीं करताहै?।४३। जिस प्राणीने दानरूपी चबेना अपने साथ बाँध लिया है वह सुखपूर्वक यमलोककी यात्राकियाकरता है । अन्यथा यहदान पुण्यके बिना यमलोककी यात्रामें बहुत दुःखहोता है ।४४। हे व्यासदेव ! जिन पुरुषों के पुण्यसभीओरसे परिपूर्ण हैं स्वर्गलोकमें जाने वाले उन प्राणियों को पद-पदमें लाभहोता है ।४५। यही समझकर मनुष्य को सर्वदा पुण्य-कार्य अवश्य ही करने चाहिए । मानवको पाप कभी नहीं करने चाहिये । पुण्य से ही देवत्वकी प्राप्ति होती है औरपापकर्मोसे नरक की प्राप्ति हुआ करती है ।४६। जो मनुष्य किसी भी प्रकार से भगवान् शिव की शरण में प्राप्तहोजाते हैं वे फिर कभी भी यमराजको तथा उसके द्वारा दिये जाने वाले नरक को नहीं देखतेहैं ।४७। पापों से और महामोह के कारण थोड़े से समय के लिये शिवकी आज्ञासे नरक में निवास किया करते हैं और इसके पश्चात् वे शिव लोक की प्राप्ति किया करते हैं ।४८। जो अपने सम्पूर्ण भाव से भगवान् शिव को प्राप्त किया करते हैं, वे जलसे कमल की भाँति अर्थात् कमल पत्रके समान पापोंसे लिप्त नहींहोते हैं ।४९।

उक्तं शिवेति यैर्नाम तथा हरहरेति च ।
न तेषाँ नरकाद् भीतिर्यमाद्धि मुनिसत्तम ।५०।

परलोकस्य पाथेयं मोक्षोपायमनामयम् ।
पुण्यसंघैकनिलयं शिव इत्यक्षारद्वयम् ।५१।
शिवनामैव संसारमहारोगैकशमाकम् ।
नान्यत्संसार रोगस्य शामकं दृश्यते मया ।५२।
ब्रह्महत्यासहस्राणि पुरा कृत्वा तु पुल्कशः ।
शिवेति नाम विमलं श्रुत्वा मोक्षं गतः पुरा ।५३।
तस्माद्विवर्द्धयेद् भक्तिमीश्वरे सततं बुधः ।
शिवभक्त्या महाप्राज्ञ भुक्तिं मुक्तिं च विंदति ।५४।

जिन्होंने कभी भी अपने मुख से भगवान् शिव का नाम या 'हर-हर' ऐसा कहा है, हे मुनिसत्तम ! उनको नरकों का और यमराजका कुछ भी भय नहीं रहता है ।५०। परलोक का चबेना और निरामय मोक्षका उपाय,पुण्य समुदायका एकमात्र स्थान'शिव' ये महेश्वर नामके दो अक्षर ही होते हैं–ऐसा शास्त्र बताते हैं ।५१। यह भगवान् शिवका परम पावन नाम ही संसार के समस्त महारोगों को शान्तकरनेका एकमात्र उपाय है । इसके अतिरिक्त संसार के महारोगों के शमन करने वाला अन्य कोई भी उपाय नहीं देखाजाताहै ।५२। प्राचीनसमयमें सहस्रोंकी सँख्यामें ब्रह्महत्या जैसा पाप करने वाले लोगोंने 'शिव-शिव'—यह निर्मल नाम का श्रवण करके मोक्षपद की प्राप्तिकी है ।५३। हेमहाप्राज्ञ । इसलिए विद्वान् व्यक्ति का कर्त्तव्य है कि वह निरन्तर शिवकी भक्तिको हृदयमें बढ़ावे । शिव भक्तिसे भुक्ति और मुक्ति दोनों की प्राप्ति होती है ।५४।

॥ मृत्यु काल का ज्ञान ॥

भगवन्स्त्वप्रसादेन ज्ञातं मे सकलं मतम् ।
यथाचौन तु ते देव यो मन्त्रश्च यथाविधि । १ ।
अद्यापि संशयस्त्वेकः कालचक्र प्रति प्रभो ।
मृत्युचिह्नं यथा देव किं प्रमाणं तथायुषः । २ ।
सर्वं कथय मे नाथ यद्यहं वल्लभा ।
इति पृष्ठस्तया देव्या प्रत्युवाच महेश्वरः । ३ ।

सत्यं ते कथयिष्यामि शास्त्रं सर्वोत्तमं प्रिये ।
ये न शास्त्रेण देवेशिनरैः कालः प्रबुध्यते ॥ ४ ॥
अहः पक्षं तथा मासमृतुं चायनवत्सरौ ।
स्थूलसूक्ष्मगतैश्चिह्नैर्बाहरंतर्गतैस्तथा ॥ ५ ॥
तत्तेऽहं सम्प्रवक्ष्यामि शृणु तत्त्वेन सुन्दरि ।
लोकानामुपकारार्थं वैराग्यार्थमुमेऽधुना ॥ ६ ॥
अकस्मात्पांडुरं देहमूर्ध्वराग समंततः ।
तदा मृत्युं विजानीयात्षण्मासाभ्यन्तरे प्रिये ॥ ७ ॥

पार्वतीजी ने कहा—हे भगवन् ! आपकी कृपा से मैंने सबज्ञान प्राप्त कर लिया है । हे देव ! यन्त्रोंसे तथा मन्त्रों से जिस तरह विधि के सहित आपका अर्चन किया जाता है वह अब कृपा करके मुझे बतलाइये ।१। हे प्रभो ! हे देव । इस काल चक्रके विषयमें मुझे अभीतक संशय होता है । मृत्यु का चिन्ह और आयुका प्रमाण जिस तरह होता है वह मुझे बताने की कृपा करें ।।२। हे स्वामिन ! यदि आप मुझपर अपनी परम प्रिया समझ कर प्यार करते हैं तो मुझे सब बातें बताइये । इस रीतिसे देवी के द्वारा कहे जाने पर शिवजी ने कहना प्रारम्भ किया ।३ । शिवजी ने कहा—हे प्रिये ! हे देवेशि ! मैं अब तुमको उस परम सत्य शास्त्र का वर्णन करता हूँ जिसके द्वारा मनुष्यों के काल का ज्ञान हो जाता है ।४। जिस तरह मृत्युके चिह्नों का ज्ञान होता है वे चिह्न दिन, पक्ष, मास ऋतु,अयन और वत्सर आदि होते हैं । ये बाहरी तथा भीतरी स्थूल तथा सूक्ष्म हुआ करते हैं ।५। हे सुन्दरी ! हे पार्वती ! मैं ये सभी लोकों के उपकार तथा वैराग्य के लिये तुम्हें बतलाता हूँ सो तुम भलीभाँति श्रवण करो ।६। हे प्रिये ! यदि अकस्मातही चारों ओरसे पीत वर्ण वाला शरीर ऊपरसे लाल होजावे तो छः महीने के अन्दर मृत्यु जाव लेनी चाहिये।७।

मुख कर्णौ तथा चक्षुर्निह्वास्तम्भो यदा भवेत् ।
तदा मृत्युं विजानीत्यात्षण्मासाभ्यन्तरे प्रिये ॥ ८ ॥
रोरवानुगतं भद्रे ध्वनिं नाकर्णयेद्द्रुतम् ।
षण्मासाभ्यन्तरे मृत्युर्ज्ञातव्यः कालवेदिभिः ॥ ९ ॥

रविसोमाग्नि संयोगाद्यदोद्योतं न पश्यति ।
कृष्णं सर्व समस्तं च षण्मासं जीवितं तथा ।१०।
वामहस्तो यदा देवि सप्ताहं स्पंदते प्रिये ।
जीवितं तु तदा तस्य मासमेकं न संशय ।११।
उन्मीलयंति गात्राणि तालुकं शुष्यते यदा ।
जीवितं तु तदा तस्य मासमेक न संशयः ।१२।
नासा तु स्रवते यस्य त्रिदोषे पक्षजीवितम् ।
वक्त्रं कठ च शुष्येत षण्मासांते गतायुषः ।१३।
स्थूलजिह्वा भवेद्यस्य द्विजाः क्लिद्यन्ति भामिनि ।
षण्मासाज्जायते मृत्युश्चिन्हैस्तै रुपलक्षयेत् ।१४।

हे प्रिये ! जिस समय मुख,कान,आँख और जिह्वाका स्तम्भ होजावे तो उस समय भी यह समझ लेना चाहिये कि छः मासके भीतर मृत्यु हो जायगी ।८। हे भद्रे ! यदि कोई व्यक्ति मनुष्योंके समुदायके द्वारा की हुई ध्वनिको शीघ्रता से सुनने में असमर्थ होतो सालके ज्ञाताओंको छः मासके अन्दर उसकी मृत्यु जानलेनी चाहिये।९।जो कोई सूरज,चाँद और अग्निके संयोगसे होने वाले प्रकाश को न देख पावे और सभी वस्तु काले वर्ण की दिखाईदें तो उसके जीवनके केवल छैमासही शेष समझ लेने चाहिए।१०। हे प्रिये ! हे देवि ! जो किसीका वामहस्त बराबर एकसप्ताहतक फड़कता रहे तो उस व्यक्ति का जीवन काल केवल एक मासका ही होता है, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है ।११। जब शरीरके सभीअवयोंमें टूटनसी होवे और तालु बराबर सूखतारहे तो समझलेना चाहियेकि उसप्राणीका जीवनकाल एकमासही शेष रहगया है इसमें तनिकभी संशय नहीं है ।१२। बातपित्त कफ इन तीनोंके दूषित होने वाले त्रिदोष रोगमेंजिस प्राणीकी नाकबहती हो तो एकपक्ष उसका क्षेष जीवन कालहोता है और यदि मुख तथा गला सूखतारहता है छैमासकी शेष आयु समझलेनी चाहिये ।१३। हे भामिनी हे द्विजगण ! जिस मनुष्यकी जीभ स्थल होजावे और दाँत एकसाथ कीट को प्राप्त हो जावे छैमासकी शेष आयु रहती है ।१४।

अंबुतैलघृतस्थं तु दर्पणे वरवर्णिनि ।
न पश्यति यदात्मानं विकृतं पलमेव च ॥१५॥
षण्मासायुः स विज्ञेयः कालचक्रं विजानता ।
अन्यच्च शृणु देवेशि येन मृत्युर्विशुद्ध्यते ॥१६॥
शिरोहीनाँ यदा छायाँ स्वकीय भुपलक्षयेत् ।
अथवा छायया हीनो मासमेकं न जीवति ॥१७॥
आङ्गिकानि मयोक्तानि मृत्युचिन्हानि पार्वति ।
बाह्यस्थानि प्रुवे भद्रे चिन्हानि शृणु साँप्रतम् ॥१८॥
रश्मिहीनं यदा देवि भवेत्सोमार्कमण्डलम् ।
दृश्यते पाटलाकारं मासाद्धेन विपद्यते ॥१९॥
अरुंधती महायानमिंदुं लक्षणवर्जितम् ।
अदृष्टतारको योऽसौ मासमेकं स जीवति ॥२०॥
दृष्टे ग्रहे च दिङ.मोहः षण्डमासाज्जायते ध्रुवम् ।
उतथ्य न ध्रुवं पश्येद्यदि वा रविमण्डलम् ॥२१॥
रात्रौ धनुर्यदा पश्येन्मध्यान्हे चोल्कपातनम् ।
वेष्ट्यते ग्रध्रकाकैश्च षण्डमासायुर्न संशयः ॥२२॥

जिस आदमी को जल, तेल और घृतमें अथवा निर्मल दपणमें अपना मुख न दिलाई दे किम्वा उसको अपनी शक्ल विकृत रूप में दिखलाई देवे तो काल-चक्रके ज्ञाता पुरुषको ऐसे व्यक्तिकी आयु सिर्फ छेमासकी हीबता देनीचाहिये। हे देवि ! मैं अब इनकेअतिरिक्त अन्यभी मौतहोजानेके लक्षण या चिह्न तुम्हें बताता हूं उन्हे सुनो ।१५-१६। जिस मनुष्यको अपनीछाया विना शिरके दिखलाईदेवे किम्वा उसेअपनी परछाँई बिल्कुल दिखलाईहीन देवे तो समझलो कि ऐसा व्यक्ति एकमहीना भी जीवित नहीं रहेगा।१७। हे गिरिजे ! हे भद्रे ! यहांतक मानवके अङ्गोसे सम्बन्धित मृत्युके चिह्न मैंने बतलाये हैं अब मैं अन्य बाहरीचिह्नभी बतलाता हूं। उन्हे तुमश्रवण करो।१८। हे देबि ! जिसको सूर्यमण्डल तथा चन्द्रमण्डल बिनाकिरणोंके लाल आकार वाला दिखलाई देवे तो वह पन्द्रह दिनमें मर जायगा ।१९।

जो व्यक्ति अरुन्धती महायान, नागवीथी चन्द्रमा और तारागणको न देख सके वह एकमासही और जीवित रहाकरता है ।२०। जिसे ग्रहोंके दिखाई देनेपर भी दिशाओंका भ्रम होजावे तो उसकी छैमासमें मौत आजाती है। यदि उतथ्य अथवा ध्रुव एवं सूर्य-मण्डलको देखने में भी असमर्थ हो और रात्रि में धनुष दिखाई दे या मध्यान्ह के समय उल्कापात दृष्टिगत हो एवं गिद्ध और काकों से लिपटा दिखाई दे तो वह निस्सन्देह छैमासमें अवश्य मर जायेगा । २१-२२।

ऋषयः स्वर्गपथाश्च दृश्यते नैव चाम्बरे ।
षण्मासायुर्विजानीव त्प्ररुषैः कालवेदिभिः ।।२३।।
अकस्माद्राहुणा ग्रस्तं सूर्यं वा सोममेव च ।
दिक्चक्रं भ्राँतवत्पश्येत्षण्मासान्म्रियते स्फुटम् ।।२४।।
नीलाभिर्मक्षिकाभिश्च ह्यकस्माद्वेष्ट्यते पुमान् ।
मासमेकं हि तस्यायुर्ज्ञातव्यं परमार्थतः ।।२५।।
मूर्ध्नि काकः कपोतश्च शिरश्चाक्म्य तिष्ठति ।
शीघ्रं तु म्रियते जतुर्मासैकेन न संशयः ।।२६।।
एव चारिष्टभेदस्तु बाह्यस्थः समुदाहृतः ।
मानुषाणां हितार्थाय संक्षेपेण वदाम्यहम् ।।२७।।
हस्तयोरुभयोर्देवि यथा कालं विजानते ।
वामदक्षिणयोर्मध्ये प्रत्यक्षं चेत्युदाहृतम् ।।२८।।

यदि किसी व्यक्तिको स्वर्गके मार्ग वाले ऋषिगण आकाशमें न दिखलाईदेवें तो कालकेज्ञान रखने वालोंको उसकी छः मासकी आयु समझलेनी चाहिये ।२३। जो अकेलाही राहुसेग्रस्त चन्द्रमा अथवा सूरजको देखाकरता है या दिकचक्रको भ्रान्तिके साथ देखता है तो निश्चय रूपसे ही छः मास में मर जाया करता है ।२४। जिस मानवका शरीर अचानकही नीले रंग की मक्खियों से व्याप्त हो जाता है वह एक मासकी ही आयु वाला होता है ।२५। जो मनुष्य गिद्ध काक और कबूतरोंके द्वारा आक्रमण करके शिर पर बैठते देखे तो निस्सन्देह उसे समझ लेना चाहिये कि वह एक मास में

अवश्य ही मृत्युके मुखमें चला जायगा ।२६। इस रीतिसे मानवोंके हितार्थ ये बाहरी मौत के चिह्न तुम्हें बतला दिये हैं अब मैं संक्षेप में बतलाता हूं ।२७। हे देवि जिस तरह वाम और दक्षिण दोनों हाथों के मध्यमें काल प्रत्यक्ष है सो बतला दिया ।२८।

एवं पक्षौ स्थितौ द्वौ तु समासात्सुरसुन्दरि ।
शुचिर्भूत्वा स्मरूदेवं सुस्नातः संयतेन्द्रियः ।२९।
हस्तौ प्रक्षाल्य दुग्धेनालक्तकेन विमर्दयेत् ।
गंधैःपुष्पौ करो कृत्वा मृगयेच्च शुभाशुभम् ।३०।
कनिष्टामादितःकृत्वा यावदगुष्ठकं प्रिये ।
पर्वत्रयकमेणैव हस्तयोरुभयोरपि ।३१।
प्रतिपदादि दिन्यस्य तिथि प्रतिपदादितः ।
सम्पुटाकारहस्तौ तु पूर्वदिङमुखः संस्थितः ।३२।
स्मरेन्नवात्मक मंत्रं यावदष्टोतर शतम् ।
निरीक्षययेत्ततो हस्तौ प्रतिपर्वणि यत्नतः ।३३।
तस्मिन्पर्वाणि सा रेखा दृश्यते भृङ्गसन्निभा ।
तत्तिथौ हि मृतिज्ञेया कृष्णे शुक्ले तथा प्रिये ।३४।
अधुना नादजं वक्ष्ये संक्षेपात्काललक्षणम् ।
गमागमं विदित्वा तु कर्म चुर्याच्छुभ प्रिये ।३५।

हे सुरसुन्दरि ! इसतरह जब दोनोंही पक्ष स्थित हों उस समय पवित्र होकर भगवान्शिवका स्मरणकरता हुआ अच्छी तरह स्नानकर जितेन्द्रिय होवे ।२९। उस समय हाथ धोकर दूध अथवा अलक्तसे केशोंको मले तथा गन्ध और फूलोंसे हाथोंकोभरकर शुभऔरअशुभ चिन्तवनकरना चाहिये। ।३०।हे प्रिये ! अपनी कनिष्ठिकाअगुलीसे लेकर अंगुष्ठतक अपने दोनोंहाथों में तीन पर्वके क्रमसे प्रतिपदा आदि तिथियोंकी गणना करके पूर्व दिशाकी ओर मुखकरलेवे और सम्पुटाकार हाथोंसे एकसौ आठबार नौअक्षर वाला मन्त्रका जाप करे ओर प्रत्येक पर्वमें यत्नके सहित हाथोंको देखे।३१-३२। ।३३।जिस पर्वमें भ्रमरके तुल्य वहरेखा दिखाई देवे,कृष्णपक्षहो या शुकल

पक्ष हो, हे देवि ! उसही तिथि में उसकी मौत समझ लेनी चाहिये।३४। हे प्रिये ! अब नादकेद्वारा प्रकट होजाने वाले कालचक्रका वर्णन करता हूं जोकि अतिसंक्षिप्त ही होगा। उसका श्रवणकरो। गमन और आगमनका ज्ञान करके ही कर्म करना चाहिये।३५।

आत्मविज्ञानं सुश्रोणि वारं ज्ञात्वा तु यत्नतः।
क्षणं त्रुटिर्लवं चैव निमेषं काष्टकालिकम् ॥३६॥
मुहूर्तंक त्वहोरात्रं पक्षमासतु वत्सरम्।
अव्दं युगं तथा कल्पं महाकल्पं तथैव च ॥३७॥
एवं स हरते कालः परिपाट्या सदाशिवः।
वामदक्षिणमध्ये तु पथि त्रयमिदं स्मृतम् ॥३८॥
दिनादि पञ्च चारभ्य पञ्चविंशद्दिनावधिः।
वामाचारगतौ नादः प्रमाणं कथितं तव ॥३९॥
भूररंध्रं दिशश्चैत्रः स्वजश्च वरवर्णिनि।
वामचारगतो नादः प्रमाणं कालवेदिनः ॥४०॥
ऋतोर्विकारभूताश्च गुणास्तत्रैव भामिनि।
प्रमाणं दक्षिणं प्रोक्तं ज्ञातव्य द्राणवेदिभिः ॥४१॥
भूतसंख्या यदा प्राणान्वहते च इडादयः।
वषस्याभ्यंतरे तस्य जीवितं हि न संशयः ॥४२॥

हे सुश्रोणि ! आत्म विज्ञान को चार तरह के यत्नसे जानना चाहिए अर्थात् क्षण त्रुटि,लव,निमेष और काष्ठकालिक। मुहूर्त्त,दिनरात,पक्ष,मास ऋतु,वत्सर,अब्द,युग,कल्प और महाकल्प यह परिपाटी है।३६-३७। इसी उपर्युक्त परिपाटीसे सदाशिव कालहरण कियाकरते हैं। वाम और दक्षिण के मध्यमें तीन मार्ग बतलाये गये हैं।३८। पाँच दिन से आरम्भ करके पच्चीसदिन पर्यन्त वामाचारगतिमें नादहोता है। यह नादका प्रमाण मैंने तुमको बतला दिया है।३९। हे परमसुन्दर वर्णवाली ! कालके वेत्ता पुरुष को वामचारगतिमें भूत, रन्ध्र,दिशा और स्वजाख्य नादजान लेना चाहिए।४०। हे भामिनि ! यदि उसमें ऋतु के विकार वाले गुण प्रतीत होते

होंतो उसे प्रमाणके ज्ञानरखने वालोंके द्वारा दक्षिण प्रमाणवाला नादकहा गया है ।४१। जिससमय भूत सरूयक इडाआदि नाड़ी प्राणोंका वहनकिया करती है तो एकवर्षके अन्दरही उसकी मृत्यु होजाया करती है,इसमें कुछ भी संशय नहीं होता है ।।४२।।

दशघस्रप्रवाहेण ह्यब्दमानं स जीवति ।
पञ्चदसप्रवाहेण ह्यब्दमेकं गतायुषम् ।।४३।।
विंशद्दिनप्रवाहेण षण्मासं लक्षयेत्तदा ।
पञ्चत्रिंशद्दिनमितं वहते वामनाडिका ।।४४।।
जीनितं तु तदा तस्य त्रिमासं हि गत युषः ।
षड्विंशद्दितमानेन मासद्वयमुदाहृतम् ।।४५।।
सप्तविंशद्दितमितं वहते त्वत्यविश्रमा ।
मासमेकं समाख्यातं जीवितं वाममोचरे ।।४६।।
एतत्प्रमाणं विज्ञेयं वामवायुप्रमाणतः ।
सव्येतरे दिनान्येव चत्वारश्चानुपूर्वशः ।।४७।।
चतुःस्थाने स्थिता देवि षोडशैताः प्रकीर्तिताः ।
तेषाँ प्रमाणं यक्ष्यामि सांप्रतं हि यथार्थत ।।४८।।
षड्दिनान्यादितः कृत्वा संख्यायाश्च यथाविधि ।
एतदन्तर्गते चैव वामरंध्रे प्रकाशितम् ।।४९।।

दश दिन पर्यन्त बराबर चलते रहने से वह वर्षभर तक जीजित रहा करता है और पन्द्रहदिनतक चलनेसे एकवर्षकी उसकी शेषआयु जानलेनी चाहिए ।४३। बीसदिनकेप्रवाहसे छःमासकी आयुही शेषसमझनीचाहिए । यदि वामनाड़ी पच्चीसदिन तक वहनकरती है तो तीनमास और छब्बीस दिनके मानसे दो मास शेष आयु होती है ।४४-४५। और यदि वामभाग से अविश्रान्त रूपसे सत्ताईस दिनतक नाड़ी चलतीरहे तो एकमासका ही शेष जीवन होता है ।४६। इसी रीतिसे वाम वायुके प्रमाण से नाद का प्रमाण समझ लेना उचित है तथा दाहिनीं ओरके क्रमसे चारदिन तकही जीवन समझे ।४७। हे देवि ! चारस्थानोंमें नाडीस्थित हुआकरती है। इस

तरह वे सभी सोलह नाड़ियाँ बतलाईगई हैं। अब मैं उन सबका यथातथ्य ठीक प्रमाण बतलाता हूँ ।४८। छः दिनसेलेकर विधिकेसाथ संख्याके अन्तर्गत दिनों में वाम रन्ध्र में प्राण प्रकाशित होता है ।४९।

षड्दिनानि यदारूढं द्विवर्षं स च जीवति ।
मासानष्टौ विजानीयाद्दिनान्यद्ध च तानि तु ॥५०॥
प्राणाः सप्तदशे चैव विद्धि वर्षं न संशयः ।
सप्तमासान्विजानीयाद्दिनैः षड्भिर्न संशयः ॥५१॥
अष्टघस्रप्रभेदेन द्विवर्षं हि स जीवति ।
चतुर्मासा हि विज्ञेयाश्चतुर्विंशद्दिनावधि ॥५२॥
यदा नवदिनं प्राणा वहंत्येव त्रिमासकम् ।
मासद्वयं च द्व मासे दिना द्वादश कीर्तिताः ॥५३॥
पूर्ववत्कथिता ये तु कालं तेषां तु पूर्वकम् ।
अवांतरदिना ये तु तेन मासेन कथ्यते ॥५४॥
एकादशप्रवाहेण वर्षमेकं स जीवति ।
मासा नव तथा प्रोक्ता दिरान्यष्टनितान्यपि ॥५५॥
द्वादशेन प्रवाहेण वर्षमेकं स जीवति ।
मासान् सप्त विजानीय त्षड्घस्रांश्चाप्युदाहरेत् ॥५६॥

जिस समय छः दिनतक नाद प्राणचढ़ा रहे तो समझना वह आदमी दोवर्ष आठमहीने और आठदिनतक जीवित रहेगा ५०। जो सत्रह दिवस तक प्राण आरूढ़रहे तो वहप्राणी एकवर्ष सातमास,छःदिन तक जिन्दारहा करता है इसमें कुछभी सन्देह नहीं होता है ।५१। यदि आठ दिन बराबर चलेतो वह दोवर्ष चारमास और चौबीसदिनतक जीवित रहता है ।५२। अर्थात् नौ दिनतक इसीओर प्राणवायु चले और पाँचमहीने बारहदिनतक इधरही प्राण चले तो दो मासका जीवनक्षेत्र रहाकरता है ।५३। जो प्राण पहलेकेतुल्य कहे हैं उनका काल पहिलेकेतुल्य बतायागया है और जोअन्तर्गत दिन बताये हैं उनसे मास कहेजाते हैं ।५४। इधर ग्यारहदिन चलनेपर वह मनुष्य एकवर्ष नौमास और आठदिन तक जिन्दारहा करता है ।५५।

बारह दिन तक इधर चलने पर एक वर्ष सात मास छै दिन पर्यन्त जीवित रहना उसको होता है ।५६।

नाडी यदा च वहति त्रयोदशदिनावधि ।
संवत्सरं भवेत्तस्य चतुर्मासाः प्रकीर्तिताः ॥५७॥
चतुर्विंशद्दिनं शेषं जीवितं च न संशयः ।
प्राणवाहा यदा वामे चतुर्दश दिनानि तु ॥५८॥
संवत्सरं भवेत्तस्य मासाः षट् च प्रकीर्तिताः ।
चतुर्विंशद्दिनान्येव जीवितं च न संशयः ॥५९॥
पञ्चदशप्रवाहेण नव मासान्स जीवति ।
चतुर्विंशदिनान्येव कथितं कालवेदिभिः ॥६०॥
षोडशाह प्रवा ण दशमासांस जीवति ।
चतुर्विंशदिनाधिक्यं कथितं कालवेदिभिः ॥६१॥
सप्तदशप्रवाहेण नवमासैर्गतायुषम् ।
अष्टादश दिनान्यत्र कथितं साधकेश्वरि ॥६२॥
वामाचारं यदा देवि ह्यष्टादश दिनावधि ।
जीवितं चाष्टमासं तु घस्रा द्वादस कीर्तिताः ॥६३॥

जब तेरहदिनतक इधरही नाड़ीचलती है तो फिर उस व्यक्तिकी आयु एकवर्ष चारमास और चौबीस दिनकी शेष रहती है । इसमें कुछभी संशय नहीं है जब वाम भागमें चौदह दिन पर्यन्त प्राण वहन किया करते हैं तो उसका जीवन काल एक वर्ष छै मास चौवीस दिन तकका शेष रहता है-इसमें बिल्कुल भी सन्देह नहीं है ।५७-५८-५९। कालके ज्ञाता लोगों का कथन है कि पन्द्रह दिनके प्रवाहमें मनुष्य नौ मास और चौवीस दिन तक जीवित रहा करता है ।६०। सोलह दिनके प्रवाहमें दश मास चौवीस दिन का जीवन काल शेष रहता है ।६०। हे साधकेश्वरि ! सत्रह दिन तकके प्रवाह होनेपर नौमास अट्ठारह दिनतक जीवन शेष बताया गया है ।६१। हे देवि ! अठारह दिन तक यदि वामाचार होता है तो आठ मास बारह दिन तक जीवन रहता है ।६३।

चतुर्विंशद्दिनान्यत्र निश्चयेन वधारय ।
प्राणवाहो यदादेवि त्रयोविंशद्दिनावधिः ॥६४॥
चत्वारः कथिता मासाः षड् दिनानि तथोत्तरे ।
चतुर्विंशप्रवाहेण त्रीन्मासांश्च स जीवति ॥६५॥
दिनान्यत्र दशाष्टौ च संहरत्येव चारतः ।
अवांतरदिने यस्तु संक्षेपात्ते प्रकीर्तिताः ॥६६॥
वामचारः समाख्यातो दक्षिणं शृणु सांप्रतम् ।
अष्टाविंशप्रवाहेण तिथिमानेन जीवति ॥६७॥
प्रवाहेण दशाहेन तत्संस्थेन विपद्यते ।
त्रिंशद्धस्रप्रवाहेण पञ्चाहेन बिपद्यते ॥६८॥
एकत्रिंशद्यदा देवि वहते च निरंतरम् ।
दिनत्रयं तदा तस्य जीवित हि न संशयः ॥६९॥
द्वात्रिंशत्प्राणसंख्या च यदा हि वहते रविः ।
तदा तु जीवितं तस्य द्विदिनं हि संशयः ॥७०॥
दक्षिणः कथितः प्राणो मध्यस्थं कथयामि ते ।
एकभागगतो वायुप्रवाहो मुखमण्डले ॥७१॥
धावमानप्रवाहेण दिनमेकं स जीवति ।
चक्रमेतत्परासोर्हि पुराविद्भिरुदाहृतम् ॥७२॥
एतत्ते कथितं देवि कालचक्रं गतायुषः ।
लोकानां च हितार्थाय किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥७३॥

हे देवि ! तेईसदिन पर्यन्त प्राणप्रवाह होता है तो केवल चौवीसदिन तकका ही जीवन शेष रहता है यह निश्चित है ।६४। यहाँ चारमास और छैदिन अधिक बताये गये हैं । चौवीस दिनके प्रवाहमें वह तीन मास और अठारह दिन तक जीवित रहा करता है ।६५। इस रीतिसे प्राणके सञ्चार से अवान्तरके दिनके कालवर्णन तुम्हारे सामने करदिया है ।६६। अबतक वाम सञ्चार का वर्णनकिया अब दक्षिण संचार का वर्णन करते हैं उसका श्रवण करो । यदि अट्ठाईस के प्रवाहसे दक्षिणसंचार होता है तोवहव्यक्ति

पन्द्रह दिन तक जीवित रहा करता है ।६७। दशदिनके प्रवाहमें दश ही दिनमें और तीसदिनके प्रवाहमें पाँच दिनमें मृत्युको प्राप्त होजाया करते हैं ।६८। हे देवि ! जिस समय इकत्तीस दिनतक प्राणचलते हैं तो निश्चयही तीनदिनतक उसका जीवन शेषरहता है ।६९। जब सूर्य बत्तीसकी संख्यामें वहनकिया करता है तो उसकाजीवन निस्सन्देह दोदिन शेषरहता है ।७०। अबतक दक्षिण प्राणके संचारका वर्णनकिया था अब आगे मध्यस्थ प्राण के विषयमें वर्णन किया जाता है जबकि वायुका प्रवाह एक भागसे मुखमें छोड़तेहुए प्रवाहसे रहता है तो वह व्यक्ति केवल एकही दिन जीवित रहा करता है । पूर्व वेत्ताओंने इसीप्रकारका कालचक्र बताया है ।।७१-७२।। हे देवि ! आयुके गतहोजाने वाले पुरुषोंका इस तरहका काल-चक्र लोकोंसे कल्याण के लिए ही वर्णित किया गया है, इसके आगे अन्य जो कुछ तुम सुनना चाहती हो सो मुझे बतलाओ ।।७३।।

ज्ञान,क्रिया,भक्तियोग तथा नवरात्रिकी श्रेष्ठता का वर्णन

व्यासशिष्य महाभाग सूत पौराणिकोत्तम ।
अपरं श्रोतुमिच्छामः किमप्याख्यानमीशितुः ।। १ ।।
उमाया जगदम्बायाः क्रियायोगमनुत्तमम् ।
प्रोक्तं सनत्कुमारेण व्यासाय च महात्मने ।। २ ।।
धन्या यूयं महात्मानो देवीभक्तिदृढव्रताः ।
पराशक्तेः परं गुप्तं रहस्यं श्रृणुतावरात् ।। ३ ।।
सनत्कुमार सर्वज्ञ ब्रह्मपुत्र महामते ।
उमायाः श्रोतुमिच्छामि क्रियायोग महाद्भुतम् ।। ४ ।।
कोदृक्च लक्षणं तस्य किं कृते च फलं भवेत् ।
प्रियं यच्च पराम्बायास्तदशेष वदस्व मे ।। ५ ।।
द्वैपायन यदेत्तत्वं रहस्यं परिपृच्छसि ।
तच्छृणुष्व महाबुद्धे सर्वं मे सर्वं वर्णयिष्यतः ।। ६ ।।
ज्ञानयोगः क्रियायोगो भक्तियोगस्तथैव च ।
त्रयो मार्गाः समाख्याताः श्रीमातुर्भुक्तिमुक्तिदाः ।। ७ ।।

मुनिगण ने कहा—हे व्यासजीके शिष्य ! हे महाभाग ! हे पौराणिकोत्तम, हे सूतजी ! अब हमारी इच्छा शिवजीके और इतिहासके सुननेकी होती है ।१। सनत्कुमारजीके जगज्जननी पार्वतीजीका परम श्रेष्ठ क्रिया-योग व्यासजीसे कहा था । हम अब आपके मुखसे उसे ही श्रवण करनेकी इच्छा रखते हैं ।२। सूतजी ने कहा—तुम सब लोग पूरे महात्मा एवं परम धन्यहो तथा देवीकी दृढ़भक्ति करनेमें भी दृढ़व्रतहो । अब में आपके समक्ष में पराशक्तिके अत्यन्त गुप्तरहस्यकी वर्णनकरता हूँ । आपलोग आदरपूर्वक सुनें ।३। व्यासजी ने कहा—हे सनत्कुमार ! हे सर्वज्ञ ! हे ब्रह्मपुत्र ! हे महामते ! मैं पार्वतीके परम सुन्दर क्रिया योगके सुननेका इच्छुक हूँ ।४। आपकृपाकरके मुझे यहबतानेकी उदारता अवश्यकरेंकि उसका क्यालक्षण है एवं उसके करनेसे क्या फलहोता है ? जोकि पराम्बाको अत्यन्तप्रिय है ।५। सनत्कुमारजी ने कहा हे व्यासजी ! हे महाबुद्धे ! आप जिस तरहके विषयमें पूछ रहे हैं में अब उसे पूर्ण रूपसे वर्णनकरता हूँ सो सब श्रवण करो ।६। जगदम्बा श्रीमाताके भुक्ति और मुक्ति प्रदान करने वाले ज्ञान योग, क्रिया-योग और भक्ति योग के तीन मार्ग होते हैं । ७ ।

ज्ञानयोगस्तु संयोगश्चित्तस्यैवात्मना तु यः ।
यस्तु वाह्याथसंयोगः क्रियायोगः स उच्यते ॥ ८ ॥
भक्तियोगो यतो देव्या आत्मनश्चैक्य भावनम् ।
त्रयाणामपि योगानां क्रियायोगः स उच्यते ॥ ९ ॥
कर्मणा जायते भक्तिर्भक्त्या ज्ञान प्रयायते ।
ज्ञानात्प्रजायते मुक्तिरिति शास्त्रेषु निश्चयः ॥१०॥
प्रधानं कारणं यागो विमुक्तेर्मुनिसत्तम ।
कियायोगस्तु योगस्य परमं ध्येयसाधनम् ॥११॥
मायाँ तु प्रकृतिं विद्यान्मायावि ब्रह्म शश्वतम् ।
अभिन्नं तद्वपुर्ज्ञात्वा मुच्यते भवबन्धनात् ॥१२॥
यस्तु देव्यालय कुर्यात्पाषाणं दारवं तथा ।
मृन्मयं वाथ कालेय तस्य पुन्यफलं शृणु ।
अहन्यहनि योगेन यजतो यन्महाफलम् ॥१३॥

प्राप्नोति तत्फलं देव्या यः कारयति मन्दिरम् ।
सहस्रकुलमागामि व्यतीतं च सहस्रकम् ।
स तारयति धर्मात्मा श्रीमातुर्धाम कारयन् ॥१४॥

मानवके चित्तका आत्माकेसाथ जो संयोग होजाता है यही ज्ञानयोग के नामसे कहा जाता है । जिसमें बाहरी अर्थोका सँयोग है वह क्रियायोग कहागया है ।५६। भगवतीदेवी और आत्माका एक होजाना ही भक्तियोग के नामसे विख्यात है । इन तीनों योगोंको क्रियाभोग कहते हैं ।६। कर्मसे ही भक्तिका उदय होता है और भक्तिसे ज्ञान उत्पन्न होता है तथा ज्ञानसे मुक्तिकी प्राप्ति हुआ करती है–ऐसाही शास्त्रकारोंने निश्चय किया है।१०। हे मुनिवर ! योगही मुक्तिका प्रमुख कारण होता है और क्रियायोग,योग का परमध्येय साधन होता है ।११। प्रकृतिको मायाजानकर और सनातन ब्रह्म को मायावी समझकर तथा इन दोनों के अभिन्न शरीरका ज्ञान प्राप्त करके मनुष्य सांसारिक बन्धन से विमुक्त हो जाता है ।१२। हे व्यासजी ! जो कोई मनुष्य पाषाण–काष्ठ अथवा मिट्टीसे देवीके मन्दिर का निर्माण करायाकरता है उसके पुण्यका महान्फल होता है । प्रतिदिन यजनकरनेसे जो पुण्य-फल मिलता है वही इस मन्दिरके निर्माण करानेसे होता है।१३। देवीके मन्दिरके करानेका फल नैत्यिक योग-यजनके ही तुल्य हुआ करता है । श्रीमाता के धामका निर्माता धर्मात्मा पुरुष अपने अतीत और आगामी एक-एक सहस्र कुलको तार दिया करता है ॥१४॥

कोटिजन्मकृतं पापं स्वल्पं वा यदि वा बहु ।
श्रीमातुर्मन्दिरारम्भक्षणादेव प्रणश्यति ॥१५॥
नदीषु च यथा गंगा शोणः सर्वनदेषु च ।
क्षमायां च यथा पृथ्गो गांभीर्य्ये च यथोदधिः ॥१६॥
ग्रहाणां च समस्तानां यथा सूर्यो विशिष्यते ।
तथा सर्वेषु देवेषु श्रीपराऽम्बा विशिष्यते ॥१७॥
सर्वदेवेषु सा मुख्या यस्तस्यः कारयेद् गृहम् ।
प्रतिष्टां सपवाप्नोति स जन्मनि जन्मनि ॥१८॥

वाराणस्यां कुरुक्षेत्रे प्रयागे पुष्करे तथा ।
गंगासमुद्रतीरे च नैमिषेऽमरकण्टके ॥१९॥
श्रीपर्वते महापुण्ये गोकर्णे ज्ञानपर्वते ।
मथुरायामयोध्यां द्वारावत्यां तथैव च ॥२०॥
इत्यादिपुण्यदेशेषु यत्र कुत्र स्थलेऽपि वा ।
कारयन्मातृरावासं मुक्ता भवति बन्धनात् ॥२१॥

करोड़ों जन्म के किये हुए पाप तो माता के मन्दिर के निर्माण का आरम्भ करते ही नष्ट हो जाया करते हैं ।१५। समस्त नदियोंमें गङ्गा सम्पूर्ण नदोंमें शोण,क्षमामें भूमि और गाम्भीर्य में समुद्र सर्वोत्तम शिरोमणि होता है । इसी प्रकार समस्त ग्रहों में भुवन भास्कर कहा गया है वैसेहीसमस्त देवताओंमेंपराम्बासभीसे अधिक मानी गईहै'१६-१७।समस्त देवों में परम प्रधान देवीके धामका निर्माण कराने वाला प्रत्येक जन्म में प्रतिष्ठा की प्राप्ति किया करता है ।१८। वाराणसी,कुरुक्षेत्र,प्रयाग,पुस्कर में तथागङ्गायां समुद्र तटपर,नैमिषारण्य में अमरकंटक में,महापवित्र पर्वत पर, गोकर्ण में ज्ञान पर्वत पर,मथुरा,अयोध्या और द्वारका इत्यादि परम पवित्र स्थलोंमें अथवा अन्यकिसीभी समुचित स्थानमें जो देवी के मन्दिर का निर्माण कराता है वह मनुष्य निश्चयहीं संसार के बन्धनों से विमुक्त होजाता है ।।१९-२१-२२।।

इष्टकानां त विन्यासो यावद्वर्षाणि तिष्ठति ।
तावद्वर्षसहस्राणि मणिद्वीपे महीयते ॥२२॥
प्रतिमाः कारयेद्यस्तु सर्वलक्षणलक्षिताः ।
स उमायाः परं लोकं निर्भयो ब्रजति ध्रुवम् ॥२३॥
देवीमूर्ति प्रतिष्टाप्य शुभतुंग्रहत्तारके ।
कृतकृत्यो भवेन्मर्त्यो योगमायाप्रसादतः ॥२४॥
ये भविष्यन्ति येऽतीता आकल्पात्पुरुषाःकुले ।
तांस्तास्तारयते देव्या मूर्ति संस्थाप्य शोभनाम् ॥२५॥
त्रिलोकीस्थापनात्पुण्यं यद् भवेन्मुनिपुंगव ।
तत्कोटिगुणित पुण्यं श्रीदेवीस्थापनाद् भवेत् ॥२६॥

मध्ये देवी स्थापयित्वा पंचायतनदेवताः ।
चतुर्दिक्षु स्थापयेद्यस्तस्य पुण्यं न गण्यते ॥२७॥
विष्णोर्नाम्नां कोटिजपाद् ग्रहणं चन्द्रसूर्ययोः ।
यत्फलं लभ्यते तस्माच्छतकोटिगुणोत्तरम् ॥२८॥

मन्दिर की चुनाई में जो ईंट लगीहैं वे जितनेवर्षतकटिकी रहती हैं उतने वर्षोंके सहस्र पर्यन्त निर्माता मनुष्य मणिद्वीपमें निवासकिया करता है ।२२। जो सभी सुलक्षणोंसे सम्पन्न देवीकी प्रतिमा निर्माण करता है वह निडर होकर पार्वतीके परमलोककी प्राप्ति किया करता है । शुभ ऋतु,ग्रेह, नक्षत्रादि के शुद्ध समय में जो देवीकी प्रतिमा को प्रतिष्ठितकरके विराजमान करता है वह योगमायाके प्रसाद से कृतकृत्य होजाताहै ।२३। २४। कल्प के आरम्भसे लेकर जो भी वंशमें उत्पन्न हुयेथे या भविष्य में भी उत्पन्नहोंगे उन सबको देवीकी सुन्दर मूर्तिकी स्थापना करने वाला पुरुष तार देता है ।२५। हे मुनि श्रेष्ठ ! इस त्रिभुवनके स्थापन करने से जितना पुण्य होता है उससे एककरोड़ गुना पुण्य केवल भगवती देवी की मूर्ति की स्थापनासे हुआ करता है ।२६। जो कोई बीच में देवी को स्थापित करके उनके चारों ओर गणेश-गौरी आदि की पचायतन स्वरूप देवताओं की स्थापना किया करता है उसका कोई भी पुण्य नहीं समझा जा सकता है ।२७। चन्द्र तथा रूर्य के ग्रहण के समय में विष्णु के एक करोड़ नाम से जो फल मिलता है उससे सौ कोटि गुना फल प्राप्त होता है ।२।

शिवनाम्नो जपादेव तस्मात्कोटिगुणोत्तरम् ।
श्रीदेवीनामजापत्तु ततः कोटिगुणोत्तरम् ॥२९॥
देव्याः प्रासादकरणात्पुण्यं तु समवाप्यते ।
स्थापिता येन सा देवी जगन्माता त्रयीमयी ॥३०॥
न तस्य दुर्लभं किंचिच्छोमातः करुणावशात् ।
वर्द्धन्ते पुत्रपौत्राद्या नश्यत्यखिलकश्मलम् ॥३१॥
मनसा ये चिकीर्षन्ति मूर्तिस्थापनभुत्तमम् ।
तेऽप्युमायाः परं लोकं प्रयान्ति मुनिदुर्लभम् ॥३२॥

क्रियमाणं तु यः प्रेक्ष्य केतसा ह्यनुचिन्तयेत् ।
कारयिष्याम्यहं यर्हि संपन्मे सभविष्यति ॥३३॥
एवं तस्य कुलं सद्यो याति स्वर्गं न संशयः ।
महामायाप्रभावेण दुर्लभं किं जगत्त्रये ॥३४॥
श्रीपराम्बां जगद्योनिं केवलं ये समाश्रिताः ।
ते मनुष्या न मन्तव्याः साक्षाद् देवीगणाश्च ते ॥३५॥
ये ब्रजन्तः स्वपन्तश्च तिष्ठन्तो वाप्यहर्निशम् ।
उमेति द्व्यक्षरं नाम व्रुवते ते शिवागणाः ॥३६॥

शिव नाम के जपने से जो पुण्य-फल होता है । उसके करोड़ गुना फल श्रीदेवी के नाम के जाप से प्राप्त होता है ।१९। तीनों देवताओं के स्वरूप वाली देवी को स्थापित किसी ने किया, उसका प्रसाद बनाने का भी पुण्य मिलता है । जिस पर श्री माता की कृपा हो जावे उसके लिये संसार में कुछ भी दुर्लभ वस्तु नहीं है । देवी के प्रसाद से समस्त पापों का क्षय और पुत्रपोत्रादि की वृद्धि होती है ।३०-३१। जो मन में भी कभी श्री माताकी उत्तममूर्त्ति की स्थापना करने की इच्छा रखते हैं बे मुनियों को भी अत्यन्त दुर्लभ पार्वती के लोक की प्राप्ति किया करते हैं ।३२। जो मनुष्य किसी अन्य के द्वारा विनिर्मित मन्दिर को देखकर अपने चित्त में भी यह विचार करता है कि अगर मेरे पास धन हो जायगा तो मैं भी देवी का मन्दिर बनवाऊँगा, ऐसे मन के संकल्प से ही उसका समस्त कुल शीघ्र ही स्वर्ग को निस्सन्देह चला जाता है । श्री महामाया का ऐसा प्रभाव है कि उसे तीनों लोक में कुछ भी दुर्लभ नहीं होता है ।६६-३४। जो इस मानव जगत् को उत्पन्न करने वाली श्री पराम्बा भगवती का केवल आश्रयही ग्रहण करते हैं उनको सामान्य मनुष्य नहीं समझना चाहिये । वे तो साक्षात् भगवती के गण ही होते हैं ।३५। जो मनुष्य रात दिन स्थिति होतेहुये सोते-जागते उमा के दो अक्षरों के नाम का उच्चारण करते रहा करते हैं ये शिवा के गण होते हैं ॥३६॥

नित्ये नैमित्तिके देवीं ये यजन्ति परां शिवाम् ।
पुष्पधूपैस्तथा दीपैस्ते प्रयास्यन्त्युमालयम् ॥३७॥

ये देवीमण्डपं नित्यं गोमयेन मृदाऽथवा ।
उपलिम्पन्ति मार्जन्ति ते प्रयास्यत्युमालयम् ॥३८॥
येर्देध्या मन्दिरं रम्यं निर्मापितमनुत्तमम् ।
तत्कुलानाञ्जनान्माता ह्याशिषः संप्रयच्छति ॥३९॥
मदीयाः शतवर्षाणि जीवन्तु प्रेमभाजनाः ।
नापदामयनानीत्थं श्रीमातावक्त्यहर्निशम् ॥४०॥
येन मूर्तिर्महादेव्या उमायाः कारिता शुभा ।
नरायुत तत्कुलजं मणिद्वीपे महीयते ॥४१॥
स्थापयित्वा महामायामूर्ति सम्यक्प्रपूज्य च ।
य य प्राथयते काम तं त प्राप्नोति साधकः ॥४२॥

जो नित्य ही तथा नैमित्तिक कर्ममें पुष्प, धूप, दीप से पराश्री शिव का पूजनकिया करतेहैं, वे अन्त समयमें पार्वतीके धामको प्र तकियाकरते हैं ।३७। जो प्रतिदिन देवीके मन्दिर या मण्डपको गोमय मिट्टीसे लीपते हैं तथा मण्डपका मार्जनकरते हैं वे पुरुषभी उमा के लोक को प्राप्तहोतेहैं ।३८। जिन्होंने माता के परम सुन्दर मन्दिर का निर्माण कराया है, उन कुलीन मनुष्यों को माता भगवती प्रसन्न होकर बहुत-से आशीर्वाद दिया करती है ।३९। भगवती ऐसेभक्तोंके लिये आशीष देतीहैकिमुझमेंअनुराग रखने वाले मेरे भक्त सौ वर्षतक बिना आपत्तिके जीवितरहें।४०। जिसने जगदम्बाकी शुभमूर्तिका निर्माण कराया और उसे स्थापित कियाहै उसके कुलके मनुष्य दशसहस्र वर्षतक मणिद्वीपजाकर निवासकियाकरतेहैं ।४१। भगवती महामायाकी प्रतिमाकी स्थापना करके भलीभाँति उसका अर्चन किया करतेहैं, वेमनमें जो-जो भी कोईमनोरथकरतेहैं उन्हें निश्चित रूप से प्राप्तकिया करते हैं । देवी की मूर्तिकोऐसाअद्भत चमत्कार है ।४२।

यः स्नापयति श्रीमातुः स्थापितां मूर्तिमुत्तसाम् ।
घृतेन मधुनाऽऽक्तेन तत्फलं गणयेत्तु कः ॥४९॥
चन्दना गुरुकर्पूरमांसीमुस्तादियुग्जलः ।
एकवर्णगवां क्षीरैः स्नापयेत्परमेश्वरीम् ॥४४॥

धूपेनाष्टादशांगेन दद्यादाहुतिमुत्तमाम् ।
नीराजन चरेद् देव्याः साज्यकर्पूरवर्तिभिः ।४५
कृष्णाष्टम्यां नवम्यां वाऽमायां वा पचदिक्तिथौ।
पूजयेज्जगतां धात्री गधपुष्पविशेषतः ।४६
सपठञ्जननीसूक्तं श्रीसूक्तमथवा पठन् ।
देवीसूक्तमथो वाऽपि मूलमन्त्रमथापि वा ।४७
विष्णुक्रान्तां च तुलसीं वर्जयित्वाऽखिल शुभम् ।
वीप्रातिकर ज्ञेय कमल तु विशेषतः ।४८
अर्पयेत्स्वर्णपुष्पं यो देव्यै राजतमेव वा ।
स याति परमं धाम सिद्धकोटिभिरन्वितम् ।४९

जो जगदम्बा भगवती की प्रतिमा की स्थापना कर उसका मधु घृत आदि से स्नान कराता है उसका ऐसा महान् फल होता है कि उसे कोई बता नहीं सकता है ॥४३॥ भगवती के स्नान का विधान है कि चन्दन कर्पूर,अगर जटामांसी,नागरमोथा आदि परम सुगन्धित पदार्थों सेसमन्वित सलिलसेकिम्वा एकहीरंगवालीगाय केदूधसेपरमेश्वरीका स्नानाभिषेक करना चाहिए। ४४॥ फिर इसके अनन्तर अठारह वस्तुओं सप्रस्तुत धूह की आहुतियाँ देनी चाहिये और घृत तथा कपूर की बत्तियों से भगवती जगदम्बा की आरती करनी चाहिए ॥ ४५ ॥ कृष्णपक्ष की अष्टमी अथा नवमी एवं अमावस्या वा पंच दिक्पालों की तिथियोंमें गन्धपुष्पोंसे जगद्धारिणी देवी का विशेषरूपसे पूजनकरना चाहिये॥४६॥ देवीसूक्तअथवा श्रीसूक्तका पाठ करके या देवी के मूलमन्त्र (नवार्ण) का जाप करके विष्णुक्रान्ता या तुलसी दलोंको चढ़ाते हुए विशेष रूपसे कमलोंको देवी पर चढ़ा देवें कि ये सब पुष्प देवी को प्रसन्नता के देनेवाले है ॥४७-४८॥ जो कोई भक्त देवीकीसेवासे स्वर्ण पुष्प या राजतनिर्मित कुसुम समर्पित किया करता है वह करोड़ों सिद्धोंके सहित परम धाम को प्राप्त होता है । ४९॥

पूजानातें सदा कार्य दासैरेन क्षमापनम् ।
प्रसीद परमेशानि जगदानददायिनि ।५०

इति वाक्यैः स्तुवन्मन्त्री देवीभक्तिपरायणः ।
ध्यायेत्कण्ठीरवारूढां वरदाभयपाणिकाम् ।५१
इत्थं ध्यात्वा महेशानी भक्ताभीष्टफलप्रदाम् ।
नानाफलानि पक्वानि नैवेद्यत्वे प्रकल्पयेत् ।५२
नैवेद्यं भक्षयेद्यस्तु शंभुशक्तेः परात्मनः ।
स निर्धूयाखिल पङ्क निर्मलो मानवो भवेत् ।५३
चैत्रशुक्लतृतीयायां या भवानीव्रतं चरेत् ।
भवबन्धनिर्मुक्तः प्राप्नुयात्परमं पदम् ।५४
यस्यामेव तृतीयायां कुर्याद्दोलोत्सवं बुधः ।
पूजयेज्जगतां धात्रीमुमां शंकरसंयुताम् ५५
कुसुमैः कुंकुमैर्वस्त्रैः कर्पूरागुरुचन्दनैः ।
धूपैर्दीपैः सनैवेद्यैः स्त्रग्गन्धैरपरैरपि ।५६

जब पूजनकी समाप्ति हो उस समय देवीके किंकरो को हाथ जोड़कर सर्वदा पापोंका क्षमापनकरना उचित हैकि हे परमेशानि ! हे जगदानन्द-दायिनी ! आप हमपर प्रसन्नहोंवे ।५ । मन्त्रोंकेपाठक इन उपर्युक्तवाक्यों के द्वारा देवीका स्तवनकरें और परमभक्ति भावमें तत्परहोते हुए मयूरपर समारूढ़ वर प्रदात्री तथा अभय धन देनेवाली भगवती जगदम्बाका ध्यान करना चाहिए ।५१। इस रीतिसे भक्तोंके अभीष्ट फलोंके प्रदान करनेवाली महेश्वरीका ध्यानकर विविधफल तथा नैवेद्य अर्पणकरे ।५२। जोपरमेश्वरी जगदम्बाके प्रसाद स्वरूप नैवेद्यको भक्षण करता है वह अपने समस्त पाप रूपी कीचड़को धोकर निर्मल चित्त होजाता है ।५३। जो कोई चैत्र शुक्ला तृतीयाको भवानीके व्रतकोकरता है वह समस्तसांसारिक बन्धनोंसेविमुक्ति होकर परमपदका लाभ कियाकरता ।५४ पार्वतदेवी उसे अभीष्ट फलदिया करती है जो पूर्वोक्त तृतीयाकेदिन देवीका सुन्दर दोलोत्सवकरे और जगत् के धारण करनेवाली पार्वतीकेसहित शिवका पूजनकरता है ।५५। पार्वती का अर्चन पुष्प,कुंकुम वस्त्र, कर्पूर,अगर चन्दन, धूप, दीप नैवेद्य तथा और भी अनेक अन्य सुन्दर गन्धों से करना चाहिए ।।५६।।

आनन्दोलयेत्ततो देवी महायाँ महेश्वरीम् ।
श्रीगौरीं शिवसंयुक्तां सर्वकल्याणकारिणीम् ।५७
प्रत्यब्दं कुरुते योऽस्या व्रतमान्दोलनं तथा ।
नियमेन शिवा तस्मै सर्वमिष्टं प्रयच्छति ।५८
माधवस्य सिते पक्षे तृतीया याऽक्षयाभिधा ।
तस्यां यो जगदम्बाया व्रतं कुर्यादतन्द्रितः ।५९
मल्लिकामालतीचंपाजपाबन्धूकपंकजैः ।
कुसुमैः पूजयेद् गौरीं शङ्करेण समन्विताम् ।६०
कोटिजन्मकृतं पाप्मं मनोवाक्कायसम्भवम् ।
निर्धूय चतुरो वर्गानक्षयानिह सोऽश्नुते ।६१
ज्येष्ठशुक्लतृतीयायां व्रतं कृत्वा महेश्वरीम् ।
योऽर्चयेत्परमप्रीत्या तस्यासाध्यं न किंचन ।६२
आषाढ़शुक्लपक्षीयतृतीयायां रथोत्सवम् ।
देव्याः प्रियतमं कुर्य्याद्यथावित्तानुसारतः ।६३

इसके अनन्तर महामाया महेश्वरी श्री शिव से श्री गौरी को जो कि समस्त कल्याणोंकेप्रदान करनेवाली देवी हैं आन्दोलनाकरे ।५७। जो पुरुष इस तिथिमें हर एक वर्ष व नियमपूर्वक व्रत तथा आन्दोलन कियाकरता है परमप्रसन्न पार्वतीदेवी उसके समस्त अभीष्टोंको प्रदानकियाकरती हैं ।५८। बैसाखमासके शुक्लपक्षमें होनेवाली अक्षय तृतीयाके दिन निरालस्य होकर जगदम्बाका व्रत जो कोई भी करता है और मालती, मल्लिका, जपा-चम्पा बन्धूक और कमलों से कुसुमों से शिवके सहित भगवती पार्वतीकी अर्चना करता है वह मनुष्य करोड़ों जन्मके कियेहुए मनवचन और शरीरके महा-पापोंको नष्टकरधर्म अर्थ काम और मोक्ष इनचारों पुरुषार्थों का लाभ करता है ।५९-६०-६१। ज्येष्ठ शुक्ला तृतीया को जो मानव इस महेश्वरी व्रतको करतेहुए देवीकाअर्चन कियाकरता है उसको इस संसारमें कुछभी असाध्य एवं अप्राप्य नहीं रहता है ।६२। प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है कि आषाढ़ शुक्लकी तृतीया तिथिकेदिन भगवतीके परम प्रिय रथोत्सवको अपनी धन शक्ति अनुसार करे ।६३।

रथं पृथ्वीं विजानीयाद्रथांगे चन्द्रभास्करौ ।
वेदानश्वान्विजानीयात्सारथिं पद्मसम्भवम् ।६४
नानामणिगणाकीर्णं पुष्पमाला विराजितम् ।
एवं रथ कल्पयित्वा तस्मिन्संस्थापयेच्छिवाम्।६५
लोकसंरक्षणार्थाय लोकं द्रष्टुं पराम्बिका ।
रथमध्ये सस्थितेति भावयेन्मतिमान्नरः ।६६
रथे प्रचलिते मन्दजयशब्दमुदीरयेत् ।
पाहि देवि जनानस्मान्प्रपन्नान्दीनवत्सले ।६७
इति वाक्यैस्तोषयेच्च नानावादित्रनिःस्वनैः ।
सीमांते तु रथं नीत्वा तत्र सपूजयेद्रथे ।६८
नानास्तोत्रैस्तततःस्तुत्वाप्यानयेत्तां स्ववेमनि ।
प्रणिपातशत कृत्वा प्रार्थयेज्जगदम्बिकाम् ।६९
एवं यः कुरुते विद्वान्पूजाव्रतरथोत्सवम् ।
एवं यः कुरुतेऽम्बायाः पूजनं च यथाविधि ।७०

इस भूमिको रथ समझकर तथा चन्द्र एवं सूर्यको इस रथ के पहिये जानकर वेदोंको उसमें जोते जाने वाले अश्व तथा ब्रह्माजीकोउसकाहांकने वाला सारथि समझ कर अनेक मणि-रत्नों से परिपूर्ण पुष्प-मालाओं से सुशोभित होनेवाले रथकी इसीभाँति कल्पना करके उसमेंभगवती पार्वती का विराजमानकरना चाहिये।।६४-६५।।बुद्धिमानभक्तको चाहिये कि उस समय अपने मनमें ऐसी भावनाकरेकिभगवतीपराम्बिका लोकों के कल्याण, रक्षाऔर देखनेकेलियेही रथके मध्यमें आजविराजमानहो रहीहैं ।६६। रथ जब धीरे-धीरे चलनेलगे तो जयकार'का उच्चारणकरे औरमुखसे यह भी कहे-हेदेवि ! हेदीनवत्सले। हम सबतुम्हारीशरणागतिमेंआये हैं, आप हमारी सबकी रक्षाकरें ।६७। इस सुन्दर रीति से वाक्यों को कहतेहुए अनेकवाद्यों को वजाते-गाते भगवतीको पूर्ण सन्तुष्ट करे और रथ कोसीमाके अन्तिम स्थल तक ले जाकर फिर उसका पूजन करे ।६८। वहाँ अर्चन के पश्चात् अनेकों स्तोत्रोंके द्वारा देवी का स्तवन करना चाहिए । इसके उपरान्त देवीको घर लौटाकरलावेऔर प्रणाम करे एवंजगज्जननीकी प्रार्थनाकरनी

चाहिए ॥६९॥ जो प्रवीण भक्त इस विधिसे जगदम्बाका पूजन व्रत और रथोत्सव को किया करते हैं वह निस्सन्देह इस लोक में समस्त भोगों का उपभोग करके अन्त में देवीके पदको प्राप्त किया करता है ॥७०॥

शल्कायां तु तृतीयायामेवं श्रावणाभाद्रयोः ।
यो व्रतं कुरुतेऽम्बायाः पूजन च यथाविधि ।७१
मोदितो पुत्रपौत्राद्यैर्धनाद्यैरिह सन्ततम् ।
सोऽन्तौ गच्छेदुमालोक सर्वलोकोपरि स्थितम्।७२
आश्विने धवले पक्ष नवरात्रव्रतं चरेत् ।
यत्कृते सकलाः कामाः सिद्धयन्त्येव न सशय।७३
नवरात्रव्रतस्यास्य प्रभाव वक्तुमीश्वरः ।
चतुरास्योन पञ्चास्यो न षडास्यो न कोऽपर।७४
वरात्रव्रतं कृत्वा भूपालो विरथात्मजः ।
हृतं राज्यं निजं लेभे सुरथो मुनिसत्तमाः ।७५
ध्रुवसंधिसुतो धीमानयोध्याधिपतिर्नृपः ।
सदर्शना हृतं राज्यं प्रापदस्य प्रभावतः ।७६
व्रतराजमिमं कृत्वा ममाराध्य महेश्वरीम् ।
संसारबन्धनान्मुक्तः समाधिर्मुक्तिभागभूत् ७७

इसी तरह से श्रावण मासतथा भाद्रपद मासकी शुक्ल पक्षकी तृतीया तिथिके दिन जो मानव श्रीमातादेवीका व्रत तथासविधि समर्चनकरता है वह संसारमें अपने पौत्र-पौत्रादिके परमसुखतथा धन-धान्यादि की समृद्धि काअनुपम आनन्दप्राप्तकरजीवनके अन्तमे समस्तलोकोके ऊपरस्थित उमा के लोककोजायाकरताहै।७१ ७२। आश्विनमासको नवरात्रिकी तृतीया के दिन व्रत अवश्यही प्रत्येक को करनाचाहिये । इस व्रत के करने से समस्य मानव मनोरथोंकी सिद्धि हुआकरतीहै इसमेंकुछभी सन्देहका अवसर नहीं है ।७३। नवरात्रिके व्रतका ऐसा अतुल एवम् अद्भुत माहात्म्यहोताहै जिसे ब्रह्मा,शिव,स्वामिकार्तिकेय तथा अन्य कोई देवभी वर्णनकरने में असमर्थ होतेहैं।।७४।। हे मुनिश्रेष्ठो । इस नवरात्रिके व्रतको करके पहिलेविरथ के

पुत्र राजा सुरथने अपने अपहृत राज्यकी प्राप्ति की थी ।७५। इसी महाव्रत के प्रभावसे महापतीपी ध्रुवसन्धिके पुत्र अयोद्धाके अधीश्वर राजा सुदर्शन ने छिने हुए राज्यको पुनः प्राप्त कर लिया था ।७६। इसी व्रत को करके समाधि नामक वैश्य महेश्वरी भगवतीकी कृपासे उसकी आराधनाके द्वारा संसारके बन्धनोंसे छूटकर मुक्त हो गया था ।७७।

तृतीयायां च पञ्चम्यां प्रतिपदामष्टमीतिथौ ।
नवम्यां वा चतुर्दश्यां यो देवीं पूजयेन्नरः ।७८
आश्विनस्य सिते पक्षे व्रतं कृत्वा विधानतः ।
तस्य सर्वमनोभीष्टं पूरयत्यनिशं शिवाः ।७९
यः कार्तिकस्य मार्गस्य पौषस्य तपसस्तथा ।
तपस्य सिते पक्षे तृतीयायां व्रतं चरेत् ।८०
लोहितैः करवीराद्यैः पुष्पैर्धूपैः सुगन्धितैः ।
पूजयेन्मङ्गलां देवीं स सर्वमङ्गलं लभेत् ।८१
सौभाग्याय सदा स्त्रीभिः कार्यमेतन्महाव्रतम्।
विद्याधनसुतापत्यर्थं विधेयं पुरुषैरपि ।८२
उमामहेश्वरादीनि व्रतान्यन्यानि यान्यपि ।
देवीप्रियाणि कार्याणि स्वभक्तैर्वं मुमुक्षुभि ।८३

जो मनुष्य तृतीया पञ्चमी सप्तमी, अष्टमी, नवमी और चतुर्दशी को भगवती महामायाका अर्चन करता है और आश्विनके शुक्लपक्षमें पूर्ण विधि-विधानके साथ व्रत किया करता है उसके सब मनोरथों की पूर्ति भगवती जगदम्बा सर्वदा पूर्णकिया करती है ।७८-७९। जो कार्तिक मार्गशीष पौष और माघ मासोंकी कृष्णपक्षकी तृतीयाको व्रत करता है और रक्त करवीर आदिके पुष्पोंसे तथा सुगन्धित धूपादिसे मङ्गलादेवीका यजनकिया करता है, उसे समस्त मङ्गलोंका लाभ अवश्यही होजाता है ।८०-८१ यह महान् व्रत सौभाग्य सुख पाने के उद्देश्य सर्वदा स्त्रियों को करना चाहिए और विद्या धन एवं सन्तान पानेके लिए पुरुषों को करना चाहिए ।८२। इसी तरह इनके अतिरिक्त सभी मुक्तिकी इच्छा रखनेवालोंको भक्ति-भावकेसाथ ही करना चाहिए । इनसे बड़ा लोकोत्तर कल्याण होता है ।८३।

संहितेयं महापुण्या शिवभक्ति विवर्द्धिनी।
नानाख्यान समायुक्ताभुक्तिमुक्तिप्रदाशिवा।८४
य एनां शृणुयाद् भक्त्या श्रावयेद्वा समाहितः।
पठेद्वा पाठयेद्वापि स याति परमां गतिम् ।८५
यस्य गेहे स्थिता चेय लिखिताललिताक्षरैः।
संपूजिता च विधिवत्सर्वान्कामान्स आप्नुयात् ।८६
भूतप्रेतपिशाचादिदुष्टेभ्यो न भयं क्वचित्।
पुत्रपौत्रादिसम्पत्तिर्लभेदेव न संशयः ।८७
तस्मादिय महापुण्या रम्योमासंहिता सदा।
श्रोतव्या पठतव्या च शिवभक्तिमभीप्सुभि ।८८

इस शिवकी भक्तिको बढ़ाने वाली और बहुत से ऐतिहासिक बातोंसे परिपूर्ण तथा भोग एवं मोक्ष दोनों दुर्लभवस्तुके प्रदानकरने वाली महान् पुण्यदायक संहिताका जो श्रवणकिया करता है या सुनता है-पढ़ता है या पढ़ाता है वह परम गतिकी प्राप्ति किया करता है ।८४-८५। जिसके घरमें अत्यन्त सुन्दर अक्षरोंसे लिखीहुई यह संहिता विराजमानहो और नित्यही विधि के साथ इसकी पूजा की जाती हो वह घर का स्वामी अपने समस्त अभीष्ट मनोकामनाओं की प्राप्ति किया करता है ।८६। उस गृह स्वामीको कभी भी भूत,प्रेत, पिशाच आदि दुष्टोंसे तनिक भी भय नहीं हुआ करताहै और पुत्र-पौत्र,धन-धान्य आदिकी सम्पत्तिका विस्तार अधिक होजाता है-इसमें कुछभी संशय नहीं है ।८७। इसलिये शिव-भक्तिके इच्छुक पुरुषोंको इस महान् पुण्यवाली उमा-संहिता को नित्य ही नियमपूर्वक सुननी तथा पढ़नी चाहिए ।८८।

कैलास-संहिता

मुनियों को व्यास के प्रति ओंकार जिज्ञासा

साधु साधु महाभागा मुनयः क्षीणकल्मषाः ।
मतिर्दृढतरा जाता दुर्लभा साऽपि दुष्कृताम् ।१
पाराशर्येण गुरुणा नैमिषारण्यवासिनाम् ।
मुनीनामुपदिष्टं यद्वक्ष्ये तन्मुनिपुंगवाः ।२
यस्य श्रवणमात्रेण शिवभक्तिर्भवेन्नृणाम् ।
सावधाना भवतोऽद्य शृण्वन्तु परयामुदा ।३
स्वारोचिषेऽन्तरे पूर्वं तपस्यन्तो दृढव्रताः ।
ऋषयो नैमिषारण्ये सर्वसिद्धनिषेविते ।४
दीर्घं सत्रं वितन्वन्तो रुद्रमध्वरनायकम् ।
प्रीणयन्तः परं भावमैश्वर्यं ज्ञातुमिच्छवः ।५
निवसन्ति स्म ते सर्वे व्यासदर्शनकांक्षिणः ।
शिवभक्तिरता नित्यं भस्मरुद्राक्षधारिणाः ।
तेषां भावं समालोक्य भगवान्बादरायणाः ।
प्रादुर्बभूव सर्वात्मा पराशरतपः फलम् ।७

श्री सूतजी ने कहा-हे निष्पाप मुनिवृन्द ? आप लोग सभी परमधन्य एवम महान् भाग्यशाली हो इसमें कुछ भी सन्देह नहींहै। तुम्हारी ऐसी दृढ़ मति कभी भी दुष्कम करने वालों की नहीं हुआ करतीहै । ।। हमारे परम गुरुवर्य व्यासजी ने नैमिषारण्य के निवासींमुनियोको जोउपदेशदियाथावही उपदेश में आपलोगोंको श्रवणकराताहूँ।२।।यह ऐसा अद्भुत उपदेश है कि इसके श्रवणकरने मात्रसे ही मनुष्योंके हृदयोंमे भगवान् शिवकी भक्ति का सञ्चार होजाता है । आपलोग सावधान चित्तहोकर सुनें और प्रसन्नता के साथ मनमें धारणकरें ।।३। स्वारोचिष मन्वन्तरके अन्तसमयमे समस्त सिद्धियों के प्रदान करने वाले नैमिषारण्य में दृढ़व्रत धारण कर तपश्चर्या

भी यही कहतीहैऔर यहएक परम निश्चतबात है।।३।। मैंने यह खूब देख व समझ लिया है कि आप लोगोंने यहां एक दीर्घ याग भगवान् शिव की, जो अम्बिका के स्वामी है,उपासना आरम्भ करदीहै ।४। इसलिये मैं आप लोगों को एक परम प्राचीन इतिहास सुनाता हूँ हेआस्तिको ! यह परम पवित्र उमा-महेश का ही सुन्दर सम्वादहै।५ पुरातनसमयमें प्रजापतिदक्ष की पुत्री जगन्मातासती ने शिव की निन्दा सुनकर पिता यज्ञ में ही अपने शरीर का त्याग कर दियाथा ।६। इसके अनन्तर अपनी तपस्या के प्रभाव से हिमाचल के यहां दूसरा जन्म ग्रहणकिया औरदेवर्षि नारदकेउप देश से शिव कीप्राप्ति के लिए अति उग्र निश्चलतपस्याकी थी ।७। उस हिमाचल गिरिराज ने गिरिजाका स्वयम्बर विधानकीपद्धति से शिवके साथ विवाह कर दिया ।८।

उपदिष्टास्त्वया देव मन्त्राः सप्रणवा मताः ।
तत्रादौ श्रोतुमिच्छामि प्रणवार्थं विनिश्चतम्।९
कथ प्रणव उत्पन्नः कथं प्रणाव उच्यते ।
मात्राः कति समाख्याताः कथं वेदादिरुच्यते।१०
देवता कति च प्रोक्ताः कर्थ वेदादि भावना।
क्रियाः कतिविधाः प्रोक्ता व्याप्यव्यापकता कथम् ।११
ब्रह्माणि पञ्च मन्त्रेऽस्मिन्कथ तिष्ठन्त्यनुक्रमात् ।
कलाः कति समाख्याताः प्रपचात्मकता कथम् ।१२
वाच्यावाचकसम्बन्धस्थानानि च कथं शिव ।
कोऽत्राधिकारी विज्ञेयो विषयः क उदाहृतः १३
सम्बन्धः कोऽत्र विज्ञेयः किं प्रयोजनमुच्यते ।
उपासकस्तु किं रूपः किंवा स्थानमुपासनम् ।१४

पार्वती ने कहा हे देव ! आपने ओंकार के सहित मन्त्रों का उपदेश किया है ।९। इस कारण से मैं सर्व प्रथम प्रणव के अर्थ के ज्ञान को प्राप्त करनेकी इच्छा रखती हूँ ।३। प्रणव की उत्पत्ति किस प्रकार से हुई ? वह प्रणव'-इस नाम से क्यों विख्यातहुआ ? प्रणव में वस्तुतः कितनी मात्रायें

वाणीसे गम्भीरतापूर्वक उन ऋषियों से कहा व्यासजी बोले-हे ऋषियो ! आपके इस यज्ञमें सबतरहसे कुशलता तो हैं न ! क्या आप लोगोंनेयज्ञपति का भली भाँति सविधि पूजन कर लिया है ।९ १०। जो महेश्वर अपनी प्रिया पार्वतीके सहित इस संसारके भयसे मुक्तकर देने वाले हैं उनका इस यज्ञमें आप लोगों ने किस इच्छा से प्रेरित होकर भक्तिभावके साथ पूजन किया है ! ।११। मैं ऐसाजानता हूं कि यह आप लोगोंकी प्रवृत्ति तथासेवा पहिले ही से हैं जिससेकि अब मुक्तिकी भावनासे आपने शिवकी आराधना की है ।१२। महातेजके धारण करने वाले महर्षि व्यासजीने जब इस तरह कहा तो नैमिषारण्य के निवासी–महापराक्रमी ऋषि अत्यन्त तेज पूर्ण पराशरकेपुत्र तथा शिवके प्रेममें परायण महात्माव्यासजीको प्रणामकरके कहने लगे ।१३-१४।

भगवन्मुनिशार्दूल साक्षान्नारायणांशज ।
कृपानिधे महाप्राज्ञ सर्वविद्याधिप प्रभो १५
त्वं हि सर्वजगद्भर्तुर्महादेवस्य वेधसः ।
साम्बस्य सगणस्यास्य प्रसादानां निधिः स्वयम् ।
त्वत्पादाब्जरसास्वादमधुपायितमानसाः ।
कृतार्था वयमद्यैव भवत्पादाब्जदर्शनात् ।१७
त्वदीयचरणाम्भोजदर्शन खलु पापिनाम् ।
दुर्लभ लब्धमस्माभिस्तस्मात्सुकृतिनी वयम् १८
अस्मिन्देशे महाभाग नैमिषारण्यसंज्ञके ।
दीर्घसत्रान्विताः सर्वे प्रणवार्थप्रकाशकाः ।१९
श्रोतव्यः मरमेशान इति कृत्वा विनिश्चिता ।
परस्परं चिन्तयन्तः परं भावं महेशितुः ।२०
अज्ञातवन्त एवैते वयं तस्माद् भवान्प्रभो ।
खेतुमर्हसि तान्सर्वान्सशयानल्पचेतसाम् ।२१

ऋषियों ने कहा-हे भगवान् ! हे मुनि शार्दूल ! हे कृपासागर । हे साक्षात् नारायणके अंशसेसमुत्पन्न । हे महाप्राज्ञ ! हे समस्त विद्याओं के

अधिपति ! हे प्रभो ! आपतो सबजगत्के स्वामी, सृष्टिके करनेवाले महादेव की माया शक्ति तथा गणोंके प्रसादके पूर्णसमुद्र हैं ।१५-१६। आपके चरण कमलोंके मधुर मकरन्दके अनुपम आस्वादन के लोलुप भ्रमरके स्वरूपवाले हम सब अब आपके चरणकमलके दर्शनपाकर आनन्दमत्त एवं कृतकृत्यहो गये हैं ।१७। आपके चरणों के दर्शन पापियों के लिये बहुत ही दुर्लभ हैं। आज हमलोग उसे प्राप्तकर अत्यन्त ही कृतकृत्य होगये ।१८। हे महाभाग ! हमलोग इस समय इस नैमिषारण्यमें ओंकारके अर्थ काप्रकाशक दीर्घ यज्ञ का अनुष्ठान कररहे हैं १९। परमेश्वरको सुनना तथा जाननाचाहिए ऐसा विचारकर परस्परमें महेश्वरका परमभाव विचारकरते हैं ।२०। हे प्रभो ! हम उसको भलीभाँति नहीं जानते हैं इसलिए अबआपकीशरणागतिमेंप्रस्तुत हुए हैं । आप समर्थ हैं कृपा करके हमारे अल्प बुद्धि वाले मनकेसन्देहका निवारण कर दीजिये ।२१।

त्वदन्यः संशयस्यास्याच्छेता न हि जगत्त्रये ।
तस्मादपारगंभीरव्यामोहाब्धो निमज्जतः ।२२
तारयस्व शिवज्ञानपोतेनास्मान्दयानिधे ।
शिवसद्भक्तितत्त्वार्थं ज्ञातु श्रद्धालवो वयम् ।२३
एवमभ्यर्थितस्तत्र मुनिभिर्वेदपारगैः ।
सर्ववेदार्थवित्मुख्यः शक्रतातो महामुनिः ।
वेदान्तसारसर्वस्वं प्रणव परमेश्वरम् ।२४
ध्यात्वा हृत्कर्णिकामध्ये सांब ससारमोचकम् ।
प्रहृष्टमानसो भूत्वा व्याजहार महामुनिः ।२५

इस त्रिभुवनमें आपके अतिरिक्त अन्य कोई भी इस तरहके सन्देहका निवारण करने वाला नहीं है अतएव हे दयाके सागर ! आप भ्रमके समुद्र में डूबते हुये हम सबको शिवके ज्ञान रूपिणी नौका से तार दीजिये । हम सबके हृदयमें शिवकी भक्तिके तत्वको जाननेकी उत्कट अभिलाष है और उसमें परम श्रद्धा भी है ।२२-२३। उस समय वेद के ज्ञाता ऋषियों ने इस प्रकारसे महर्षि व्यासजी से प्रार्थना की तब जो सम्पूर्ण वेदों के संपूर्ण

अर्थ के—तत्व के ज्ञाता शुकदेवजीके पिता महामुनि व्यासजी ने वेदान्त शास्त्र सार स्वरूप एवं ओंकारके स्वरूपमें स्थित तथा संसार से विमुक्त करने वाले उमा के सहित परमेश्वर शिव का अपने हृदय कमल में ध्यान करके परम प्रसन्न मनसे उन ऋषियोंसे कहना आरम्भकिया ।२४-२५।

शिवजी का पार्वती को मन्त्र दीक्षा देना

साधु पृष्टमिदं विप्रा भवद्भिर्भाग्यवत्तमैः ।
दुर्लभं हि शिवज्ञानं प्रणवार्थप्रकाशकम् ।१
येषाँ प्रसन्नो भगवान्साक्षाच्छूलवरायुधः ।
तेषामेव शिवज्ञानं प्रणवार्थप्रकाशकम् ।२
जायते न हि सन्देहो नेतरेषामिति श्रुतिः ।
शिवभक्तिविहीनानाममिति तत्वार्थनिश्चय ।३
दीर्घसत्रेण युष्माभिर्भगवानम्बिकापतिः ।
उपासित इतीद मे दृष्टमद्य विनिश्चतम् ।४
तस्म द्वक्ष्यामि युष्माकमितिहास पुरातनम् ।
उमामहेशसंवादरूपपद्भुतमास्तिकाः ।३
पुराऽखिलजगन्माता सती दाक्षायणी तनुम् ।
शिवनिन्दाअसगेन त्यक्त्वा च जनकाध्वरे ।६
तपः प्रभावात्सा देवी सुताऽभूद्धिमक्द्गिरेः ।
शिवार्थमतपत्सा वै नारदस्योपदेशतः ।७
तस्मिन्भूधरवर्ये तु स्वयंवरविधानतः ।
देवेश च कृतोद्वाहे पार्वती सुखमाप सा ।८

महर्षि व्यासजी ने कहा हेमहान् भाग्य वाले ब्राह्मणो ! आपलोगों ने इस समय बहुतही अच्छाप्रश्न पूछा है । प्रणवके अर्थका प्रकाशक शिव का ज्ञान संसार में अत्यन्त दुर्लभ है ।१। जिनके ऊपर त्रिशूल धारण करने वाले भगवान् शिवकी कृपाहोती है उन्हींको प्रणवके अर्थकाप्रकाश करने वाला शिवका ज्ञान प्राप्तहोताहै ।२। इसमें कुछभी सन्देह नहींहै कि शिव के ज्ञानका प्रकाश शिवकी भक्तिसेरहित मनुष्योंकोकभीनहीं होता है । श्रुति

करने वाले ऋषिगण यज्ञों के स्वामी रुद्रदेव का एक सहस्र वर्ष में पूर्ण होने वाला यज्ञ करने में प्रवृत्त हो गये और ऐश्वर्य के जानने की इच्छा से भावनःपूर्वक प्रणाम किया ॥४-५॥ महर्षि व्यासजी के दर्शन पाने की इच्छा से वे वहाँ निवास करने लगे और शिव-भक्ति में परायण होकर भस्म तथा रुद्राक्ष की माला धारण करने लग गये ॥ ६ ॥ उन समस्त ऋषियों की प्रीति भावना को समझकर भगवान् व्यासजी जोकि नारायण के अंश से उत्पन्न समस्त जगत् के गुरु,पराशरऋषि के तपस्या के फल स्वरूप और सर्वात्मा हैं, वहाँ साक्षात् प्रकट हो गये ॥७॥

तं दृष्ट्वा मुनयः सर्वे प्रहृष्टवदनेक्षणाः ।
अभ्युत्थानादिभिः सर्वैरुपचाररुपाचरन् ।८
सत्कृत्य प्रददुस्तस्मै सौवर्णं विष्टरं शुभम् ।
सुखोपविष्टः स तदा तस्मिन्सौवर्णविष्टरे ।
प्राह गम्भीरया वाचा पाराशर्य्यो महामुनि ।९
कुशलं किं नु युस्माकं प्रब्रूतास्मिन्महामखे ।
अर्जितः किं नु युष्माभिः सम्यगध्वरनायक ।१०
किमर्थमत्र युष्माभिरध्वरे परमेश्वरः ।
स्वर्चितो भक्तिभावेन साम्बः संसारमोचकः ।११
युष्मत्प्रवृत्तिर्मे भाति शश्रूषाऽपूर्वमेव हि ।
परभावे महेशस्य मुक्तिहेतोः शिवस्य च ।१२
एवमुक्ता मुनीन्द्रेण व्यसेनामिततेजसा ।
मुनया नेमिषारण्यवासिनः परमौजसः ।१३
प्रणिपत्य महात्मानं पराशर्यं महामुनिम् ।
शिवानुरागसहृष्टमानसं च त ब्रुवन् ।१४

उनका दर्शनकर मुनियों के मनमें और नेत्रों में अत्यन्त आनन्द हुआ और उनका आगे बढ़कर स्वागत सत्कार करते हुए सबने पूजन किया ।७।वहाँ सबमुनिगण ने महर्षिव्यासजी कोविराजमान करनेके लिए सुवर्ण निर्मित्तआशनदिया।उसहेमासनपरबैठकर महामुनिव्यासजीनेअपनीपरममधुर

होती है? यह कितने वेदके आदि में कहा जाता है।१०। प्रणवके कितने देवता होते हैं। किस रीतिसे वेद आदि की भावना की जाया करती है। क्रियायें कितने प्रकार की होती हैं और इसकी व्याप्य-व्यापकता किस प्रकार से होती।११। इन आपके उपदिष्ट मन्त्रों में अनुक्रम से किस तरह पाँच ब्रह्म स्थित रहा करते हैं। कलायें कितनीहोतीहैं और प्रपञ्चात्मकता का क्या स्वरूप है।१२। हे शिव! वाच्य-वाचक का सम्बन्ध और स्थान किस रीति से होता है। आप यह बतानेकी कृपा करें कि इसका अधिकारी कौन है और विषय क्या है।१३। हे महेश्वर! कृपा कर यह समझाइये कि इसका सम्बन्ध और प्रयोजन क्या है। यहभी बताइये कि इसका उपासक कैसा व्यक्ति होता है और उपासना करनेका स्थान कौन-सा उचित होता है॥१४॥

उपास्यं वस्तु किंरूपं किंवा फलमुपासितुः।
अनुष्ठानविधिः कोवा पूजास्थान च किं प्रभो।१५
पूजायां मण्डल किंवा किंवा ऋष्यादिकं हर।
न्यासजापविधि का वा को वा पूजाविधिक्रम।१६
एतत्सर्वं महेशान समाचक्ष्व विशेषतः।
श्रोतुमिच्छामि तत्वेन यद्यस्ति मयि ते कृपा।१७
इतिदेव्या समापृष्टो भगवानिन्दुभूषणः।
तां प्रशस्य महशानीं वक्तुं समुपचक्रमे।१८

इसकी उपास्य वस्तु किस प्रकार की होती है और इसकी उपासना करनेवालेको क्या फल मिला करता है। इसके अनुष्ठान करनेकी विधि क्या होती है और पूजाका कौन सा उपयुक्त स्थान हुआ करता है।१५। इसकी पूजाकेमण्डल और उनके ऋषिआदि कौन होते हैं उसके न्यास आदि करने की विधि किस प्रकार की होती है और उसका क्रम क्या होता है।१६। हे शिव! यदि आप मुझपर अनुकम्पा रखते है तो मेरे सामने यह सबवर्णन कीजिए। मेरी तत्वोंके विषयों में श्रवण करने की बड़ीही तीव्र अभिलाषा

है ।१७। जगदम्बा पार्वतीने यहेश्वरसे इस तरह बहुत-सी बातेंपूछीं तो महादेवजी पार्वतीके प्रश्नोंको सुनकर उनकी प्रशंसा करतेहुए कहो लगे ।१८

ओंकार का स्वरूप तथा विरजा होम विधि

श्रणु देवि प्रवक्ष्यामि यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।
तस्य श्रवणमात्रेण जीवः साक्षाच्छिवो भवेत् ।१
प्रणपार्थपरिज्ञा मेव ज्ञानं मदात्मकम् ।
बीजं तत्सर्वविद्यानां मत्रं प्रणवनामकम् ।
अतिसूक्ष्मं महार्थं च ज्ञेय तद् वटबीजवत् ।
वेदादि वेदसारं च मद्रू पं च विशेषतः ।३
देवो गुणत्रयातीत सर्वज्ञः सर्वकृत्प्रभुः ।
ओमित्येकाक्षरे मंत्रे स्थितोऽहं सवगःशिवः ।४
यदस्ति वस्तु तत्सर्वं गुणाप्राधान्ययोगतः ।
समस्तं व्यस्तमपि च प्रणवार्थं प्रचक्षते ।५
सर्वार्थसाधकं तस्मादेकं ब्रह्मं तदक्षरम् ।
तेनौमिति जगत्कृत्स्नं कुरुते प्रथमं शिवः ।६
शिवो वा प्रणवो ह्येष प्रणवो वा शिवःस्मृत।
वाच्यवाचकयोर्भेदो नात्यंत वित्तते यतः ।७

शिवजीने कहा- हे देवि ! तुमने जितनी भी बातें पूछी हैं वह तुमसे सब कहता हूँ । इसके श्रवण करने मरसे ही यह जीवात्मा साक्षात् शिवके स्वरूप को प्राप्त कर लेता है ।१। प्रणवका अर्थ जान लेना ही मेरा ज्ञान प्राप्तकरा देता है, वहमन्त्र समस्त विद्याओंका बीज होता हैं ।२।वह प्रणव वटका वृक्ष और उसके बीजके तुल्य महान् सूक्ष्म तथा बहुतही स्थूलहोता है । वही प्रणव वेदकाआदि सारतया मेरा रूपहोता है ।३। वहीदेव तीनों गुणों से परे-सर्वज्ञ और सबका सृजन करने वाला है ऊँ'-इस अक्षर वाले मन्त्र में सर्वगत शिवजी विद्यमान रहते है ।४। यह जो कुछभी वस्तुहै वह सवगुण और प्रधानके सयोगसे सतस्तसमष्टिरूप विराट् और व्यष्ठि स्वरूप स्थावर जङ्गमात्मक प्रणव का अर्थही होता है ।५। इस कारण से वहएक

अक्षर वाला ब्रह्म ही सम्पूर्ण अर्थ का साधक है। इसी सर्वार्थ साधकता से ॐ ऐसे आकार वाले प्रणवसे भगवान महेश्वर सर्वप्रथम इस समस्त जगत् का निर्माण किया करते हैं ॥६॥ भगवान् शिव प्रणव स्वरूप हैं और प्रणव साक्षात् शिव स्वरूप हैं। वाच्यार्थ और उसके वाचक में कुछ भी भेद नहीं होता है ॥७॥

तस्मादेकाक्षरं देवं माँ च ब्रह्मर्षयो विदुः।
वाच्यवाचः कयोरक्य मन्यमाना विपश्चितः ।८
अतस्तदेव जानीयात्प्रणव सर्वकारणम्।
निर्विकारी मुमुक्षुर्मां निर्गुणं परमेश्वरम् ।९
एनमेव हि देवेशि सर्वमन्त्रशि रोमणिम्।
काश्यामहं प्रदास्यामि जीवानां मुक्तिहतवे ।१०
तत्रादौ सम्प्रवक्ष्यामि प्रणवोद्धारमम्बिके।
यस्य विज्ञानमात्रेण सिद्धिश्च परमा भवेत् ।११
निवृत्तिमुद्धरेत्पूर्वमिन्धनं च ततः परम्।
कालं समुद्धरेत्पश्चाद्दण्डमीश्वरमेव च ।१२
वर्णपञ्चकरूपोऽयमेवं प्रणवउद्धृतः।
त्रिमात्रबिन्दुनादात्मा मुक्तिदो जपतां सदा ।१३
ब्रह्मादिस्थावरान्तानां सर्वेषां प्राणिनां खलु।
प्राणः प्रणव प्रवाय तस्मात्प्रणव ईरितः ।१४

इसी कारण से ब्रह्म ऋषि गुरु को एकाक्षर स्वरूप कहा करते हैं। वाच्य और वाचक की एकता को मानते हुए जो विद्वान होते हैं, मैं भी उन्हींके द्वारा प्राप्त होनेवाला होताहूँ ।८ हे परमेश्वरि। इसलिये प्रणव को सबका कर्त्ता मानना चाहिए। जो मुमुक्षु या मुक्त होतेहैं वे निर्गुणपरमेश्वरको निर्विकार अर्थात् समस्त विकृतियों से रहित जानतेहैं ।९ हे देवि। काशीमें अपना प्राणत्याग करनेवालेप्राणियोंको अन्यसमयमें मैं इस समस्त मन्त्रोंके शिरोमणि ओंकारका ही उपदेशकियाकरताहूँ ।१०। हे अम्बिके। मैं अब तुम्हारे सामने सबसे पहिले प्रणवके उद्धारको वर्णन करता हूँ जिसके

विज्ञान मात्रसेही परम सिद्धि प्राप्त हुआकरती है ।११। सर्वप्रथम ओङ्कार में अकारके आश्रित निवृत्ति कलाका उद्धारकरना चाहिए । उकारमें ईधन कलाका-मकारमें काल कलाका--नाद में दण्ड कलाका और बिन्दुमें ईश्वर कलाका उद्धारकरना चाहिए ।१२। इस रीतिसे उक्त पाँचवर्णोंके रूपवाले प्रणव का उद्धार होता है । यह प्रणव तीन मात्रा और बिन्दु नाद स्वरूप जपने वालोंको महामुक्ति प्रदान करने वाला होता है ।१३। ब्रह्मा से लेकर स्थावर पर्यन्त यह सम्पूर्ण प्राणियोंका प्राण होता है, इसी से इसका नाम 'प्रणव'–यह होता है ।१४।

आद्यं वर्णमकारं च उकारमुत्तरे तनः ।
मकार मध्यतश्चैव नादांतं तस्य चोमति ।१५
जलवद्वर्णमाद्यं तु दक्षिणे चोत्तरे तथा ।
मध्ये मकारं शुचिवदोंकारे मुनिसत्तम ।१६
अकारश्चाप्युकारोऽय मकारश्च त्रयं क्रमात् ।
तिस्रो मात्राः समाख्याता अर्द्धमात्रा ततः परम् :१७
अर्द्धमात्रा महेशानि बिन्दुनास्वरूपिणी ।
वर्णनिया न वै चाद्धा ज्ञेया ज्ञानभिरेव सा ।१८
ईशानः सर्वविधानामित्याद्याः श्रुतयः प्रिये ।
मत्त एव भवन्तीति वेदाः सत्यं वदति हि ।१९
तस्माद् वेदादिरेवाहं प्रणवो मम वाचकः ।
वाचकत्वान्ममैषोऽपि वेदादिरिति कथ्यते ।२०
अकारस्तु महद् बीजं रजः स्रष्टा चतुर्मुख ।
उकारः प्रकृतिर्योनिः सत्वं पालयिता हरिः ।२१

अकार, उकार और मकार के क्रमसे से तीन मात्रा और पीछे आधी मात्रा होती है । इस तरह से 'ओम' होता है ।१५। हे पार्वति । यह जल के तुल्य दक्षिण-उत्तरमें स्थित है । हे मुनिश्रेष्ठ ! इसकेमध्यमें मकारहोता है । इस तरह से इस ओंकार की स्थिति होती है ।१६। हे महेशानि ! अकार,उकार और मकार ये तीनमात्रायें है इसके पीछे आधी मात्रा होती

है ।१७। हे परमेश्वरि ! वह आधी मात्राही नाद विन्दु स्वरूप वाली है। यहाँपर ईशानः: सर्व विद्यानां ईश्वरःसर्वभूतानाम्'और'यो वै ब्रह्माण विद-धाति पूर्वम्' इत्यादि श्रुतिवचन प्रमाणहोते हैं ।१८। ये सब मुझसेही होते हैं, वेदोंने यह बात बिल्कुल सत्य प्रतिपादित की है ।१९। इस कारणसेवेद के आदिमेंओंकार त्मक भी मैं ही विद्यमान रहा करता हूँ। ओंकार मेरा वाचक होने से वेद के आदि मे कहा जाता है ।२०। अकार इसका महान् बीज है। इसी के रजोगुण से ब्रह्मा हुआ करते हैं। उकार उसकी प्रकृति योनि है। सत्व गुण के पालन करने वाले हरि होते हैं ।२१।

मकारः पुरुषो बीजी तमः संहारकोहरः ।
विन्दुर्महेश्वरो देवस्तिरोभाव उदाहृतः ।२२
नादः सदा शिव प्रोक्तः सर्वानुग्रहकारकः ।
नादमूर्द्धनि सचिन्त्य- परात्परतर शिवः ।२३
स सर्वज्ञ सर्वकर्त्ता सर्वशो निर्म्मलोऽव्ययः ।
अनिर्देश्यः परब्रह्म साक्षात्सदसतः परः ।२४
अकारादिषु वर्णेषु व्यापक चोत्तरोत्तरम् ।
व्याप्यं त्वधस्तनं वर्णमेवं सर्वत्र भावयेत् ।२५
सद्यादीशानपर्यंतान्यकारादिषु पञ्चसु ।
स्थितानि पञ्च ब्रह्माणि तानि मन्मूर्त्तयः क्रमात् ।२६
अष्टौ कलाः समाख्याता अकारे सद्यजाः शिवे ।
उकारे वामरूपिण्यस्त्रयोदश समीरिताः ।२७
अष्टावघोररूपिण्यो मकार संस्थिता कलाः ।
बिन्दौ चतस्र संभूता कला पुरुषगोचराः ।२८

इसमे मकार पुरुष बीज होता है। इसके तमोगुणसेयुक्त सृष्टिकेसंसार करनेवालेशिव हैं। बिन्दुस्वरूप साक्षात्महेश्वरदेव हैं,उससे तिरोभावहोता है ।२२। नाद स्वरूप सबके अनुग्रह करने वाले साक्षात् शिव हैं। नाद का मस्तकमें विचारकरके ही वहाँ शिवध्यान करनेके योग्यहोते हैं। वे परात्पर मंगल स्वरूप वाले हैं ।।२३।। वे सर्वज्ञ हैं, सबके कर्त्ता--सबके स्वामी —

निर्मल-अविनाशी और अद्वैत हैं। निर्देशनकरनेमें अयोग्य सत्आसनसे भी परे साक्षात् परब्रह्म है।२४। अकार जिनके आदिमें है उन सब अक्षरों में क्रमसे व्यापक हैं,अकारकी अपेक्षा ओंकार व्यापक है, उकारसे अकार वर्ण नीचेके भागमें व्याप्त है। इसी तरहसे इनवर्णोंमें भी भावना करनीचाहिए।२५।अकारादि पाँचवर्णोंमें ब्रह्मके स्वरूप वाले सद्यः-वाम देव घोर-पुरुष ईशान हैं वे सब क्रमसे से मेरी ही मूर्तियाँ हैं।२६। सद्यः-इससे होने वाले अकारके स्वरूप शिवमें आठकलाओं का वर्णन कियागया है और उकार में वाम देव रूप तेरह कलायें हैं।२७। मकार में अघोर रूपिणी आठ कलायें विद्यमान हैं और बिन्दुमें पुरुष गोचर चार कलायें होती हैं।२८।

नादे पंच समाख्याताः कला ईशानसभवाः।
षड्विधैक्यानुसंधानात्प्रपचात्मकतोच्यते ।२९
मन्त्रो यन्त्रं देवता च प्रपचो गुरुरेव च।
शिष्यश्च षट्पदार्थानामेषामर्थं श्रृणु प्रिये ।३०
पचवर्णसमष्टिः स्यान्मन्त्रः पूर्वमुदाहृतः ।
स एव यंत्रतां प्राप्तो वक्ष्ये तन्मण्डलक्रमम् ।३१
यन्त्रं तु देवमारूप देवता विश्वरूपिणी ।
विश्वरूपो गुरुः प्रोक्त शिष्यो गुरुवपु स्मृत ।३२
ओमितीद सर्वमिति सर्वं ब्रह्मेति चश्रुते ।
वाच्यवाचकसम्बन्धोऽप्ययमेवार्थ ईरितः ।३३
आधारो मणिपूरश्च हृदयं तु ततः परम्।
विशुद्धिराज्ञा च ततः शक्तिः शान्तिरिति क्रमात् ।३४
स्थानान्येतानि देवेशि शान्यतीत परात्परम्।
अधिकारी भवेद्यस्य वैराग्य जायते दृढम् ।३५

नादमें ईशान स्वरूपवाली पाँचकलायें स्थित हैं। आगे बताये जानें वाले छःपदार्थोंकी एकताके अनुसन्धानसे प्रणवकी प्रपञ्चात्मकता होती है ॥२९॥ मंत्र-यंत्र-देवता विश्व और गुरु तथा शिष्य ये छै पदार्थ होते हैं। हे प्रिये! अब मैं इनका अर्थ बतलाता हूँ उसको तुम श्रवण करो ।३०।

पूर्वोक्त यह प्रणवमात्र पाँचवर्णोंकी सदृष्टिस्वरूपहैं । वही मंत्रकीस्वरूपता को प्राप्तकर लिया करता है अब उसके मण्डलका क्रम बतलाया जाता है ।३१। यन्त्र देवता रूप हैं, देवता विश्व रूप हैं और विश्वरूप गुरु है तथा शिष्य-गुरु का ही एक शरीर है ।३२। 'ओमितीद सर्वम्' इसका अर्थ यह होता हैकि यह सब ओंकारस्वरूपही है-ऐसा श्रुति कहती है वाच्य-वाचक के सम्बन्धका यही अर्थ होता है ।३३। अब स्थान बतलाते हैं—आधार-मणिपुर-हृदय-विशुद्धि चक्र-आज्ञा चक्र-शक्ति और शान्त कला ये क्रम से स्थान बतलाये गये हैं ।३४। हे देवि ! शान्त्यतीत को ही परात्पर कहा जाता है । जिसको दृढ़ वैराग्य हो जाता है वही इसका योग्य अधिकारी होता है ।६३।

विषयः स्यामह देवि जीवब्रह्मैक्यभावनात् ।
सम्यन्ध श्रृणु देवेशि विषयः सम्यगीरितः ।३६
जीवात्मनोर्मया सार्द्धमैक्यस्य प्रणवस्य च।
वाच्यवाचकभावोऽत्र सम्बन्धः समुदीरितः ।३७
व्रतादिनिरतः शान्तस्तपस्वी विजितेन्द्रियः ।
शौचाचारसमायुक्तो भूदेवो वेदनिष्ठितः ।३८
विषयेषु विरक्तः सन्नैहिकामुष्मिकेषु च ।
देवानां ब्राह्मणोऽपीह लोकजेषु शिवव्रती ।३९
सर्वशास्त्रार्थतत्वज्ञ वेदान्तज्ञानपारगम् ।
आचार्यमुपसंगम्य यति मतिमतां वरम् ।४०
दीर्घदण्डप्रणामाद्यैस्तोषयेद्यत्नयः सुधीः ।
शांतादिगुणसंयुक्तः शिष्यः सौसील्यवानृवर ।४१
यो गुरु स शिवः प्रोक्तो य शिव स गुरु स्मृतः ।
इति निश्चत्य मनसा स्वविचारं नित्रेदयेत् ।४२

हे देवि ! मैं ही इसका विषय हुँ । जीव ब्रह्मकी एक भावना करनी चाहिए । हे देवि ! विषयको बतलादियागया अब सम्बन्धको श्रवणकरो ! ।३६। मेरे समेत जीवत्मा की प्रणव को एकता होती है । यहाँ बोध्य

बोधक भावहोता है अर्थात् जीवात्मा और ब्रह्मकी एकताका बोधकप्रणव होता है यही सम्बन्ध है ।३७। व्रत आदिने तत्पर,शान्त तपस्वी,जितेन्द्रिय पवित्र आचरण वाला, ब्राह्मण,वेदमें निष्ठा रखने वाला,विषयोंसे विरक्त, लोक एवं परलोककी इच्छासे दीन देवता और ब्राह्मण में भक्तिरखनेवाला, शिव व्रतको धारण करने वाला,सम्पूर्ण शास्त्रार्थके तत्व का ज्ञाता, वेदान्त ज्ञानके पारगामी यति,श्रेष्ठ बुद्धि वाला पुरुष आचार्य के पास जाकर दीर्घ दण्डके समान प्रणामकरे और यत्नपूर्वक आचार्यको पूर्णरूपसे सन्तुष्ट करे और शान्ति प्रभृति गुणों चे युक्त,शीलवान् तथा शक्ति आदि गुण से युक्त, बुद्धिमान् शिष्यको ऐसा जानना चाहिए कि जो गुरुदेव हैं सो साक्षात्शिव ही हैं और साक्षात्शिव हैं वहीगुरुदेव हैं ऐसा अपनेमनमें सुदृढ़निश्चयकरके ही पीछे उनसे अपना विचार निवेदित करें ।३—३९-४०-४१-४२।

लब्धानुज्ञस्तु गरुणा द्वादशाहं पयोव्रती ।
समुद्रतीरे नद्यां च पर्वते वा शिवालये ।४३
शुक्लपक्षे तु पचम्यामेकादश्यां तथारि वा ।
प्रातः स्नात्वा तु शुद्धात्मा कृतनित्यक्रिय सुधीः ।४४
गुरुमाहुय विधिना नान्दीश्राद्धं विधाय च ।
क्षौर च कारियत्याऽथ कक्षोपस्थविवर्जितम।४५
केशश्मश्रुनखानां वै स्नात्वा नियतमानस ।
सक्तुप्राश्याथ सायाह्ने स्नात्वा स ध्यामुपास्य च ।
सायमौपासनं कृत्वा गरुणा सहितो द्विजः ।
शास्त्रोक्तदक्षिणा दत्या शिवाय गुरुरूपिणे :४७
होमद्रव्याणि सपाद्य स्वसूत्रोक्तविधानतः ।
अग्निमाधाय विधिवल्लौकिकादिविभेदतः ।४८

अपने गुरुदेवकी आज्ञा प्राप्तकर बारह दिन पर्यन्त पयोव्रत करे अर्थात केवलजल का पान करके रहे । समुद्र तट पर अथवा पर्वत की चोटी या गुफा में किम्बा शिला पर निवास करे ।४३। बुद्धिमान शिष्य को चाहिए

मासके शुक्ल पक्षका पञ्चमी अथवा एकादशीकेदिन परमपवित्र मनसेप्रातः कालमें नित्य क्रिया के उपरान्त स्नान करे ।४४। फिर अपने गुरुदेव को बुलाकर विधि-विधानके सहित नान्दीमुख श्राद्धकरके बगल तथा उपस्थको छोड़कर क्षौर कर्मकरावे ।४५। माथेके केश,दाढ़ी-मूँछ और नाखूनोंको दूर कराके जितेन्द्रिय रहते हुए स्नानकरके सायंकालीन सन्ध्योपासनाकरे ।४६ सतूका आहारकरे औरफिर स्नानकर सन्ध्याकर्मकरे । इसतरह गुरुकेसहित ब्राह्मण सन्ध्याकालकी उपासनाकरके शिवस्वरूप अपने गुरुदेवकी सेवा में वस्त्र और दक्षिणादेनी चाहिए ।४७। जोभी अपना सूत्र हो उसकी विधिके अनुसार होम द्रव्य लेकर विधि पूर्वक लौकिक आदिके भेदके साथ अग्न्याधान करना चाहिए ॥४८॥

आहिताग्निस्तु यः कुर्यात्प्राजापत्येष्टिनाहिते।
श्रौते वैश्वानरे सन्यक् सर्ववेद सदक्षिणम ।४९
अथाग्निमात्मन्यारोप्य ब्राह्मणः प्रव्रजेद् गृहात ।
श्रपयित्वा चरुं तस्मिन्नामिदन्नाज्यभेदतः ।५२
पौरुषेणैव सूक्तेन हुत्वा प्रत्यृचमात्मवान् ।
हुत्वा च सौविष्टकृतीं स्वसूत्रोक्तविधानतः ।५१
हुत्वोपरिसात्तन्त्रं च तेनाग्नेरुत्तरे बुधः ।
स्थित्वासने जपेन्मौनी चैलाजिनकुशोत्तरे ।
यावद् ग्राह्यमुहूर्तं तु गायत्रीं दृढमानसः ।५२
ततः स्नात्वा यथापूर्व श्रपयित्वा चरुं ततः ।
पौरुषं सूक्तमारभ्य विराजातं हुनेद् बुधः ।५३
वामदेवमतेनापि शौनकादिमतेन वा ।
तत्र मुख्य वामदेव्य गर्भयुक्तो यतो मुनिः ।५४
होमशेष समाप्याथ प्रातरौपासनं हुनेत् ।
ततोऽग्निमात्मन्यारोप्य प्रातः सन्ध्याम् गास्य च ।५५
सवितर्युदिते पश्चात्मावित्रीं द्राविमेत्क्रमात्
एषणानां त्रयं त्यक्त्वा प्रेषमुच्चार्य च क्रमात् ।५६

जो कोई अहिताग्नि प्राजापत्य यज्ञ के अनुसार हवन कर चुकता है उसकोचाहिए अपने सर्वस्वधन की दक्षिणदेकर इस वेदोक्त वैश्वानर अग्नि को आत्मा में धारण कर ब्राह्मणको घरसे निकलकर संन्यासी हो जाना चाहिए। समिधा-अन्न और घृतयुक्त चरुलेकर पुरुषसूक्तके एकमन्त्रसे हवन करना चाहिए। इसके पश्चात् अपने सूक्तके विधानसे स्विष्टकृत सम्बन्धित आहुतियों से हवन करे।४९-५०-५१। तन्त्र के आगे उत्तर दिशाकी तरफ आसनपर बैठकर जोकि कुआका आसन होनाचाहिए स्वयं मृग चर्म धारण करे,जब तक ब्राह्म मुहूर्त रहे तबतक मनकी पूर्ण दृढ़ताके साथ गायत्री का जाप करना चाहिए।५२। इसके अनन्तर पुनः स्नान करके चरुका निर्माण करे और पुरुष सूक्तसे आरम्भकर विरजा होम पर्यन्त आहुतियाँ देवे।५३। वामदेव या शौनक मन्त्रसे हवनकरे। इनमें वामदेवका मतश्रेष्ठ है क्योंकि इसका कारण यही है कि यह महापुरुष गर्भ में स्थित ही मुक्त होकरफिर जीवन्मुक्त रहते हुए विचरण करते रहे हैं।५४। इसके पश्चात् शेषहवनको पूरा करे और फिर प्रातः कालीन उपासनाका हवन करना चाहिए। इसके पश्चात् पुनः अग्निको अपनी आत्मामें आरोपित कर प्रातःकालकी सन्ध्योपासना करनी चाहिए।५५। लोकेषणा अर्थात् लोकमें मानादि की इच्छा रखना.वित्तेषणा और पुत्रेषणा इनतीनोंका त्याग करके सूर्यके समुदित हो जानेपर क्रमपूर्वक गायत्रीका जपकरना चाहिए फिर क्रमसे प्रेषका उच्चारण करे।५६।

शिखोपवीते संत्यज्य कटिसूत्रादिक ततः ।
विसृज्य प्राङ्मुखो गच्छेदुत्तराशामुखोऽपि वा ।५७
गृह्णीयाद्दण्डकौपीनाद्युचिवृत लोकवर्तने ।
विरक्तश्चेन्न गृह्णीयाल्लोकवृत्तिविचारिणे ।५८
गुरोः समीपं गत्वाऽथ दण्डवत्प्रणमेत्त्रयम् ।
समुत्थाय ततस्तिष्ठेद्गुरुपादसमीपतः ।५९
ततो गुरुः समादाय विरजानलजं सितम् ।
भस्म तेनैव तं शिष्यं समुद्धूल्यं यथाविधि ।६०

अग्निरित्यादिभिर्मन्त्रैस्त्रिपुण्ड धारयेत्ततः ।
हृत्पङ्कजे समासीनं मां त्वया सह चिंतयेत् ।६१
हस्त निधाय शिरसि शिष्यस्य प्रीतमानसः ।
ऋष्यादिसहित तस्य दक्षकर्णे समुच्चरेत् ।३२
प्रणवं त्रिप्रकारं तु ततस्तस्यार्थमादिशेत् ।
षड विधार्थ परिज्ञानसहितं गुरुसत्तमः ।६३

इसके पश्चात् अपनी शिखा (चोटी),उपवीत (जनेऊ) और कटिसूत्र आदि सबको छोड़कर पूर्व या उत्तर दिशाका गमनकर चले जाना चाहिये ।५७। लोककी वृत्ति (व्यवहार) के निभानेकेलिये केवल एक कोपीन और एकदण्डका ग्रहणकरे और यदि पूर्ण विरक्तिसे लोकवृत्तिकी कठिनाईप्रतीत होती होतो इनका विचारकर त्यागकर देना चाहिए ।५८। अपने गुरुदेवके निकट पहुँचकर भूमिमें पतित दण्डके तुल्यगिरकर प्रणामकरे और उठकर श्री गुरुदेवके चरणोंमें स्थित होजावे ।५९। उससमय गुरुदेव विरजाअग्नि से समुत्पन्न श्वेत भस्म उस समय शिष्य के शरीर में मलकर 'अग्नि रिति भस्म'-'वायु रिति भस्म' इत्यादि मन्त्रोंसे भस्मसे तिलक करावें और फिर आपके सहित मेरा अर्थात् शिव और पार्वती का ध्यान करना चाहिए । ।६०-६१। इसके पश्चात् गुरुदेव प्रसन्न चित्तसे शिष्यके मस्तक पर अपना हाथ रखकर ऋषि आदि का स्मरण कर उसके दाहिने कान में मन्त्र का उच्चारण करें ।६२, सूक्ष्म स्थूल आदि प्रणव, जो पहिले तीन प्रकार के बताये जाचुके हैं,उसका और उस प्रणवके अर्थका उपदेश करना चाहिए । शिष्यको उस समय छै प्रकारके प्रणवका ज्ञान प्राप्त करनेके लिये दण्डवत् करनी चाहिए ।५३।

द्विषट्प्रकार स गुरुं प्रणम्य भुवि दण्डवत् ।
तदधानो भवेन्नित्य वेदान्त सभ्यगभ्यसेत् ।६४
मामेव चिंतयेन्नित्यं परमात्मानमात्मनि ।
विशुद्धं निर्विकारं वै ब्रह्मसाक्षिणमव्ययम् ।६५
शमादिधर्मनिरतो वेदान्तज्ञानपारगः ।
अत्राधिकाही स प्रोक्तो यतिर्विगतमत्सरः ।६६

हृत्पुण्डरीकं विरज विशोकं विशदं परम् ।
अष्टपत्रं केसराढ्यं कर्णिकोपरि शोभितम् ।६७
आधारशक्तिमारभ्य त्रितत्वान्तमय पदम् ।
विचिन्त्य मध्यतस्तस्य दहरं व्योमभावयेत् ।६८
ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मां त्वया सह ।
चिंतयेन्मध्यतस्तस्य नित्यमुद्युक्तमानसः ।६९
एवं विधोपासकस्य मल्लोकगतिमेव च ।
मत्तो विज्ञानमासाद्य मत्सायुज्यफलं प्रिये ।७०

इस तरह बारह प्रकारसे गुरुदेवको प्रणाम करे औरफिर सदा गुरुदेव की अधीनता में रहकर नित्य प्रति वेदान्तका अभ्यास करना चाहिए ।६४। सदा अपनी आत्मा में मुझ परमात्माका ध्यान करते रहना चाहिये जोकि विशुद्ध बिना विकारोंवाला शुद्ध अविनाशी हैं ।६५। शम-दम आदिकेधर्ममें विशेष रूपसे रति रखताहुआ वेदान्त दर्शनशास्त्रका पारगामी होकर अभिमानसे एकदमरहित रहतेहुए जो रहता है वही यतिकहलाता है और ऐसा यति पुरुषही इसका अधिकारी भी होता है।६६। हृदय पुण्डरीकमें विराजमान,परम स्वच्छ शोकरहित अति उज्ज्वल अष्टदल कमलके तुल्य,मकरन्द से युक्त कर्णिका से शोभित हृदय-कमलके मध्यमें आधार शक्तिसे आरम्भ करके मणिपूरक हृदयके तत्वान्तमय आधारका विचारकर उस समय दहर प्रकाश की भावना करनी चाहिए ।६७-६८। 'ॐ' इस एकाक्षर मन्त्रका उच्चारण आपकेसहित मेराअत्यन्त उत्कण्ठाकेसाथ स्मरणकरता हुआ उस दहरा प्रकाशके मध्यमें नित्यही मेरा स्मणकरता रहे ।६९। हे परम प्रिये ! इस विधिसे मेरी उपासना करते रहनेवाले पुरुषको मेरेलोककी प्राप्ति हुआ करती है और वह मुझसे ज्ञान प्राप्तकर अन्तमें मेरेही सायुज्य मोक्ष पदकी प्राप्ति किया करता है ।७०।

पूजा स्थान में मण्डल रचना विधि

परीक्ष्यं विधिवद्भूमि गंधवर्णरसादिभिः ।
मनोऽभिलषिते तत्र वितान्वितताम्बरे ।१

सुप्रलिपे महीपृष्ठ दर्पणोदरसन्निभे ।
अरत्नियुग्ममानेन चतुरस्त्रं प्रकल्पयेत् ।२
तालपत्रं समादाव तत्समायामविस्तरम् ।
तस्मिन्भायान्प्रकुर्वीत त्रयोदशसमां कलाम् ।३
तत्पत्रं तत्र निःक्षिप्य पश्चिमाभिमुखः स्थितं ।
तत्पूर्वभागे सुदृढ़ सूतमादाय रंजितम् ।४
प्राक् प्रात्यग्दक्षिणोदक् च चतुर्दिशि निपातयेत् ।
सूत्राणि देवदेवेशि नवशष्टयुत्तर शतम् ।५
कोष्ठानि स्युस्ततस्तस्य मध्य कोष्ठं तु कर्णिका ।
कोष्ठाष्टकं बहिस्तस्य दलाष्टकमिहोच्यते ।६
दलानि श्वेतवर्णानि समग्राणि प्रकल्पयेत् ।
पीतरूपां कर्णिका च कृत्वा रक्तां च वृत्तकम् ।७

श्री भगवान् शिवने कहा-गन्ध, वर्ण, रस आदिसे पृथ्वीकी भली-भाँति परीक्षाकरके फिर अपने मनकी अभिलाषा के अनुसार जोभी परम अभीष्ट एवं सुन्दर हो वैसा एक वितान (चन्दोवा) वहाँ तानना चाहिये ।१। वहाँ भूमिको लीपकर दर्पणके समान एकदम चिकनी बनादेवे । दो हाथके बराबर चार अस्त्र चौकोर स्थानके मण्डपकी रचना वहाँ करे ।२। फिर तालपत्रोंमें उसीकेसमान लम्बे तथा चौड़ेस्थानमें बराबर तेरहभाग करनेचाहिए ।३।उस चतुरस्त्र मण्डलमें उस पत्रको रखकर फिर स्वयं पश्चिम दिशाकी ओर मुखकरके स्थित हो वे और उसके पूर्व भागमें कलायेसे पूर्वसे दक्षिण-उत्तरके क्रमसे चौदह डोरे वहाँ रखने चाहिए । हे देवि ! ऐसा करने पर उस कोष्ठमें एक सौ उनहत्तर कोठे बन जाँयगे ।४-५। कोष्ठोंके मध्य में जो कर्णिका है उससे आठ कोष्ठकके बाहर उस मध्य कोष्ठक का दलाष्टक होता है ।६। श्वेत वर्ण के दल और श्याम अग्र भाग की कल्पना करे, उसकी पीली कर्णिका बनाकर लाल-पीली रंग दे ।७।

वनभिद्दलदक्षं तु समारभ्य सुरेश्वरि ।
रक्तकृष्णाः क्रमेणैव दलसन्धीन्विचित्रयेत् ।८

कर्णिकायां लिखेद्यंत्रं प्रणवार्थप्रकाशकम् ।
अधः पीठ समालिख्य श्रीकण्ठ च तदूर्ध्वत ।९
तदुपर्यमरेशं च महाकाल च मध्यतः ।
तन्मस्तकस्थं दन्डं च तत ईश्वरमालिखेत् ।१०
श्यामेन पीठ पीतेन श्रीकन्ठ च विचित्रयेत् ।
अमरेशं महाकालं रक्तं कृष्णं च तौ क्रमात् ।११
कुर्यात्सुधूम्रं दन्डं च धवलं चेश्वरं बुधः ।
एवं यन्त्रं समालिख्य रक्त सद्येन वेष्टयेत् ।१२
तदुत्थेनैव नादेन विद्यादीशानमीश्वरि ।
तद्वासपंक्तीर्गृह्णीयादाग्नेयादिक्रमेण वै ।१३
कोष्टानि कोणभागेषु चत्वार्येतादि सुन्दरि ।
शुक्लेनापूर्य वर्णादि चतुष्कं रक्तधातुभिः ।१४

हे सुरेश्वरि ! इस तरह कमल के दलों को लाल तथा पीला बनाकर क्रमसे दलसन्धिको लाल तथा काली बनावे ।८ उसकी कर्णिकामें प्रणव अर्थका प्रकाशयन्त्र लिखनाचाहिए । उसके नीचे पीठ और उसकेऊपर श्री-कण्ठ लिखे ।९। इसके ऊपर अमरेश, मध्य में महाकाल और महाकाल के मस्तकके समीपमें दण्डलिखकर फिर ईश्वरको लिखनाचाहिये ।१०। श्याम रंगसे सिंहासनको चित्रितकरे तथा पीले रंगसे श्रीकण्ठको रगे । अमरेशको रक्त वर्णसे तथा महाकाल को कृष्ण वर्णसे रंगे ११। दण्ड का वर्ण धूम्र बनावे और ईश्वरकावर्ण धवलबनाना चाहिए । इसरीतिसे लालयन्त्रलिख कर सद्योजात मन्त्र से आच्छादन करना चाहिये ।१२। हे ईश्वरि ! उसमे उत्थित नादसे ईशानको भेद करे तथा अग्नेय क्रमसे उसको वाह्य पंक्तिको ग्रहणकरे ।१३। हे सुन्दरि ! उसके कोणोंमें चारकोष्टोंको श्वेत और लाल धातुसे रगे औरफिर चारद्वारोंकी कल्पनाकरनी चाहिये और उसके इधर-उधरके कोष्ठपीले रंगसे परिपूर्ण करे ।१४।

आपूर्य तानि चत्वारि द्वाराणि परिकल्पयेत् ।
ततस्तत्पार्श्वयोर्द्वन्द्व पीतेनैव प्रपूरयेत् ।१५

आग्नेयकोष्ठमध्ये तु पीताभे चतुरस्त्रके ।
अष्टपत्र लिखेत्पद्म रक्ताभ पीतकर्णिकम् ।१६
हकारं विलिखेन्मध्ये विन्दुयुक्तं समाहित ।
पद्मस्य नर्ऋते काष्ठे चतुस्स्रं तदा लिखेत् ।१७
पद्ममष्टदल रक्तं पीतकिंजल्ककर्णिकम् ।
शवर्गस्य तृतीय तु षष्टस्वरसमन्वितम् ।१८
चतुर्दशस्वरोपेतं बिन्दुनादविभूषितम् ।
एतद्बीजवरं भद्रे पद्ममध्ये समालिखेत् ।१९
पद्मस्येशानकोष्ठे तु यथा पद्मं समालिखेत् ।
कवर्गस्य तृतीयं तु पञ्चमस्वरसंयुतम् ।२०
विलिखेन्मध्यतस्तस्य बिन्दुकण्ठे स्वल कृतम्।
तद्बाह्यपक्तित्रियते पूर्वादिपरितः क्रमान् ।२१

अग्नेय दिशाके कोष्ठके मध्य चार अस्त्र प्रमाणवाला आठ दलका एक कमल बनावे । इसको पखुरीलालवर्णकी बनावे और कर्णिकाको पीतवर्ण की बनानी चाहिये।१५-१६। इससे मध्यमें बिन्दुयुक्त दकारलिखे औरफिर कमलकी नैऋत्यकीओरके कोष्ठमें चारअस्त्र मध्यवाला अष्टदल कमलबनावे। उसका रङ्ग लाल बनावे और कर्णिका का रंग पीला बनावे । शवर्गका तीसरा अक्षर (श) छठवें स्वरसे संयुक्त (शू) लिखे ।१७-१८। चौदहवाँ स्वर (औ) बिन्दु नाद से युक्त (औ) यह बीज है । भद्रे ! इसको पद्म मध्यमें लिखना चाहिए ।१९। इसी तरहसे कमल के ईशान कोष्ठमें लिखे । कवर्ग का तृतीय अक्षर (ग) पंचम स्वर उकारके सहित (गु) लिखे ।२०। उस ईशान दिशा के कमल के कन्ठ भागमें बिन्दु लिखे,इसकी बाहिर तीन पक्तियाँ है उनमें पूर्व दिशाके क्रमसे लिखना चाहिए ।२१।

कोष्ठानि पञ्च गृह्णीयाद गिरिराजसुते शिवे।
मध्ये तु कर्णिकां कुर्यात्पीतां रक्तं च वृत्तकम् ।२२
दलानि रक्तवर्णानि कल्पयेत्कल्पवित्तमः ।
दलबाह्ये तु कृष्णेन रन्ध्राणि परिपूरयेत् ।२३

आग्नेयादीनि चत्वारि शुक्लेनैव प्रपूरयेत् ।
पूर्वे षड्बिन्दुसहित षटकोण कृष्णमालिखेत् ।२४
रक्तवर्ण दक्षिणतस्त्रिकोणं चोत्तरे ततः ।
श्वेताभमर्द्धचन्द्रं च पीतवर्णं च पश्चिमे ।२५
चतुरस्र क्रमातेषलिखेत् बीजं चतुष्टयम् ।
पूर्व बिन्दुं समालिख्य शुभ्रं कृष्णं तु दक्षिणे ।२६
उकारमुत्तरे रक्तं मकार पश्चिमे ततः ।
अकारं पीतमेवं तु कृत्वा वर्णं चतुष्टयम् ।२७
सर्वोर्ध्वपक्त्यधः पक्तौ समारभ्य च सुन्दरि ।
पीत श्वेतं च रक्तं च कृष्ण चेति चतुष्टयम् ।२८
तदधो धवलं श्याम पीत रक्तं चतुष्टयम् ।
अधस्त्रिकोणके रक्तं शुक्लं पीतं वरानने ।२९

हे पार्वति ! पाँच कोष्ठ बनाकर उनमें मध्यकोष्ठका पीतवर्णका बनावे और शेष वृत्तको रक्तवर्णका बनाना चाहिये ।२२। विधिके ज्ञाता पुरुषको चाहिएकि कमल दलोंको लालवर्णका बनावे और दलके बाहिरके छिद्रोंको कृष्णवर्णसे रङ्गनाचाहिये ।२३। अग्नि दिशाकी ओर वाले चार कोष्ठोंको शुक्ल रङ्गसे चित्रित करे और पूर्व दिशाके छै बिन्दुओंके सहितषट्कोणों को कृष्णवर्णसे लिखे ।२४। दक्षिण दिशासे उत्तर दिशाकी ओर तीनकोणों में लालरङ्ग तथा श्वेत कान्तिसेयुक्त अर्द्धचन्द्रके आकारका पीतवर्ण पश्चिम कोणमे रङ्गना चाहिए ।२५। चारों बीजों को क्रमसे चौकोरके प्रमाण से क्रमशः लिखना चाहिये । पूर्वको ओर तो शुभ बिन्दु तथा दक्षिणमें कृष्ण वर्णके लिखे ।२६। उत्तरकी ओर रक्त वर्ण उकार, मकार पश्चिमकी ओर लिखेहुए आकारको पीलेवर्णका करे । इस प्रकार से चारों वर्णोंमें लिखना चाहिये ।२७। हे सुन्दरि ! नीचे की पंक्ति से आरम्भ करके ऊपर वाली चारों पक्तियाँ पीत,श्वेत, रक्त और कृष्ण वर्णकी बनावे ।२८। उसके नीचे श्वेत,श्याम पीत और रक्त रङ्ग से रगे हुए नीचेके त्रिकोण में लाल, शुक्ल और पीत रङ्ग करना चाहिए ।२९।

एवं दक्षिणमारभ्य कुर्यात्सौमान्तमीश्वरि ।
तद्बाह्यपंक्तौ पूर्वादिमध्यमान्त विचित्रयेत् ।३०
पीतं च कृष्णं च श्याम श्वेतं च पीतकम् ।
आग्नेयादि समारभ्य रक्तं श्याम सितं प्रिये ।३१
रक्तं कृष्णं च रक्तं च षट्कमेवं प्रकीर्तितम् ।
दक्षिणाद्य महेशानि पूर्वाविधि समीरितम् ।३२
नैर्ऋताद्य तु विज्ञेयमाग्नेयावधि चेश्वरि ।
वारुणं तु समारभ्य दक्षिणावधि चेरितम् ।३३
वायव्याध महादेवि नैर्ऋतावधि चेरितम् ।
इशानाद्यं तु विज्ञेयं वायव्यविधि चाम्बिके ।
इत्युक्तो मन्डलविधिर्मया तुभ्यं च पार्वति।३५
एवं मण्डलमालिख्य नियतात्मा यतिः स्वत ।
सौरपूजां प्रकुर्वीत स हि तद्वस्तुतत्पर ।३६

हे ईश्वरि ! इस प्रकार दक्षिणसे आरम्भकरके सोमान्ततक करे और उसकी बाह्य पंक्ति पूर्वादि मध्यमान्त में चित्रितकरे ।३०। पीत, रक्त,श्वेत श्याम,कृष्ण रंग आग्नेय दिशा से आरम्भ करे, रक्त श्याम और श्वेत और लाल कृष्ण तथा लाल यह छै रंगभरे, हे महेशानी ! यह दक्षिणके आदिसे लेकर पूर्वतक करनाचाहिए ।३१-३२। हे ईश्वरि ! नैर्ऋत्यदिशासे आग्नेय दिशा पर्यन्त और वरुण दिशासे लेकर दक्षिण दिशा पर्यन्त,हे महादेवि ! वायव्यसे लेकर नैर्ऋत्य दिशातक,हे परमेश्वरि ! पूर्व आदिसे पश्चिमतक और ईशानसे लेकर वायव्य दिशापर्यन्त यही करे हे पार्वति ! यह समस्त मण्डलकी रचनाकरनेके पश्चात् ब्रह्ममें परायणहोकर भगवान्भुवनभास्कर सूर्यदेव की पूजा करनी चाहिए ।।३३.से ।३६।।

आसन प्राणायाम विधान

दक्षिण मण्डलस्याथ वैयाघ्र चर्म शोभनम् ।
आस्तीर्य शुद्धतोयेने प्रोक्षयेदस्त्रमंत्रतः ।१

प्रणवं पूर्वमुद्धृत्य पश्चादाधारमुद्धरेत् ।
पश्चाच्छक्तिकमलं चतुर्थ्यन्तं नमोऽन्तकम् ।२
मनुमेव समुच्चार्य स्थित्वा तस्मिन्नुदङ्मुख ।
प्राणानायम्य विधिवत्प्रणवोच्चारपूर्वकम् ।३
अग्निरित्यादिभिर्मन्त्रैर्भस्म सधारयेत्ततः ।
शिरसि श्रीगुरुं नत्वा मण्डल रचयेत्पुनः ।४
त्रिकोणवृत बाह्ये तु चतुरस्रात्मक क्रमात् ।
अभ्यर्च्यौमिति साधारं स्वाप्य शख समर्चयेत् ।५
आपूर्य शुद्धतोयेन प्रणवेन सुगन्धिना ।
अभ्यर्च्य गन्धपुष्पाद्यै प्रणवेन च सप्तधा ।६
अभिमंत्र्य ततस्तस्मिन्धेनुमुद्रां प्रदर्शयेत् ।
शङ्खमुद्रां च तेनैव प्रोक्षयेदस्त्रमंत्रतः ।७

शिवजी ने कहा–दक्षिण मण्डल सुन्दर बाघम्बर बिछाकर अस्त्रमंत्रसे शुद्ध जलके द्वारा प्रोक्षण करना चाहिए ।१। प्रथम प्रणव फिर आधार का उद्धार करे । इसके पश्चात् शक्ति कमल का उद्धार करे । इन सबके साथ चतुर्थी विभक्ति और अन्त में 'नमः' लगाकर उच्चारण करना चाहिए ।२। 'शक्ति कमलाय नमः' इत्यादि रीतिसे इसका उच्चारणकरना चाहिये ।३। 'अग्निरीति भस्म'-इत्यादि मन्त्रोंसे भस्मधारण करे । श्री गुरुदेवको मस्तक झुकाकर नमस्कार करके फिर मन्डलकी रचनाका आरम्भ करना चाहिए ।४। बाहर की ओर त्रिकोण वृत क्रमसे चार शस्त्र (चौकोन) प्रमाण करे 'ओम अर्वन'इस मन्त्रसे पीठको धारणकर शखङ्का अर्चनकरे ।४। प्रणव से शुद्ध एवं सुगन्धित जल को अभिमन्त्रित करके गन्ध पुष्पादि से सात बार ओंकार से पूजन करना चाहिए ।५-६। इस रीति से मन्त्रों से अभिमन्त्रित करके धेनु मद्राबनाकर दिखानी चाहिए और इसी तरह अस्त्रमन्त्रसे शंख मुद्र भी दिखानी चाहिए ।७।

आत्मानं गंधपुष्पादिपूजोपकरणानि च ।
प्राणायामत्रयं कृत्वा ऋष्यादिकमथाचरेत् ।८

अस्य श्रीसौरमन्त्रस्य देवभाग ऋषिस्ततः ।
छन्दो गायत्रमित्युक्तं देवः सूर्यो महेश्वरः ।९
देवता स्यात्षडङ्गानि ह्रामित्यादीनि विन्यसेत् ।
ततः संप्रोक्षयेत्पद्ममस्त्रेणाग्नेरगोचरम् ।१०
तस्मिन्समर्चयेद्विद्वान् प्रभूतां विमलामपि ।
सारां चाथ समाराध्य पूर्वादिपरतः क्रमात् ।११
अथ कालाग्निरुद्रं च शक्तिमाधारसंज्ञिताम्।
अनन्तं पृथिवीं चोव रत्नद्वीप तथैव च ।१२
सङ्कल्पवृक्षोद्यानं च गृहं मणिमय ततः ।
रक्तपीठं च सपूज्य पादेषु प्रागुपक्रमात् ।१३
धर्मं ज्ञानं च वैराग्यमैश्वर्यं च चतुष्टयम् ।
अधर्माग्निकोणादिकाणेष च समचयेत् ।१४

इसके अनन्तर स्वयं अपनी आत्माको गन्ध क्षत पुष्पादि समस्तअर्चना की सामग्रीसे शुद्धकर तीनबार प्राणायाम करे और ऋषि आदिका स्मरण करनाचाहिये,८। इससौरमन्त्रका देवभागऋषि गायत्रीछन्द और सूर्यमहेश्वर देवता हैं ।९। ह्राँ,ह्रीं, 'ह्रूं'इत्यादि बीज मन्त्रों से छै अंकों में सविधि न्यास करे फिर अस्त्रमन्त्र से अग्नि कोणके कमल का प्रोक्षण करनाचाहिए ।१०। साधक विद्वान्को उस आग्नेय दिशाके कमल का महा उज्जवलताके साथ सारवस्तुसे आराधनकर पूर्वादि दिशामें अर्चन करना चाहिए ।११। कालाग्नि,रुद्र,आधार शक्ति,अनन्त पृथ्वी,रत्नद्वीप,सकल्प वृक्ष का बगीचा मणिमय गृह और चरणोंमें मनको संलग्न करके रक्त पीठका पूजनकरना चाहिये ।१२-१३। धर्म,ज्ञान,वैराग्य और ऐश्वय इन चारों का तथा अधर्म तथा अज्ञानादि का अग्निकोण के कोनेमें पूजन करना चाहिए ।१४।

मायाधश्छदन पश्चाद्विद्योर्ध्वैच्छदन ततः ।
सत्वं रजस्तमश्चैव समभ्यर्च्य यथाक्रमम् ।१५
सम्पूज्य पश्चात्सौराख्य योगपाठ समर्चयेत् ।
पीठोपरि समाकल्प्य मूर्ति मूलेन मूलवित् ।१६

निरुद्धप्राण आसीनो मूलेनैव स्वमूलतः ।
शक्तिमुत्याप्य तत्तेजः प्रभावात्पिगलाध्वना ।१७
पुष्पांजलौ निर्गमय्य मण्डलस्थस्य भास्वतः ।
सिन्दूरारुणदेहस्य वामार्द्धदयितस्य च ।१८
अक्षस्रक्पाशखट्वाङ्गकपालांकुशपङ्कजम् ।
शङ्ख चक्रं दधानस्य चतुर्वक्त्रस्य लोचनैः १९
राजितस्य द्वादशभिस्तस्य हृत्पङ्कजोदरे ।
प्रणवं पूर्वमुद्धृत्य ह्रांह्रींसस्तदनन्तरम् ।२०
प्रकाशशक्तिसहितं मातण्डं च ततः परम् ।
आवाहयामि नम इत्यावाह्यावाहनाख्यया ।२१
मुद्रया स्थापनाद्याश्च मुद्राः संदर्शयेत्ततः ।
विन्यस्यांगानि ह्रांह्रौंह्रूं मेतेन मनुना तत ।२२

माया से नीचे के भाग का आच्छादन और विद्या से ऊर्ध्व भाग का आच्छादन करके फिर रज-तम इनका विधि के साथ पूजन करे ।१५। इस प्रकारसे पूजनकरके सौर नामक योग पीठकी पूजाकरनीचाहिये । सिंहासन पर मूलमन्त्रसे प्रतिमकी स्थापना करे ।१६। इसके अनन्तर मूलमन्त्रसे ही मूलाधारमें प्राण वायुको रोककर आसनपर बैठकर पिंगला नाड़ीके प्रभाव से आधार शक्ति को उठाना चाहिये ।१७। वहाँ मण्डल में विराजमान, प्रकाशयुक्त,सिंदूरके तुल्य अरुण देहके धारणकरने वाले भगवान्को पार्वती के सहित पुष्पांजलि समर्पितकरे ।१८। जो देव वहाँ रुद्राक्ष माला धारी पाश खट्वाङ्ग कपाल-अकुश-कमल-शख धारण करते हुए चार मुख और बारह नेत्र वाले हैं ।१९। उनके हृदय कमल के मध्यमें प्रथम प्रणव का उद्धार करे इसके पश्चात् ह्रां ह्रीं सः'इस मन्त्रसे प्रकाश शक्तिधारी सूर्य का आवाहन करता हूँ-यह कहकर पीछे 'नमः' लगा कर उनका आवाहन करना चाहिये ।२० २१। मुद्रादिक की स्थापना करके फिर मुद्रा बना कर दिखावें और समस्त अङ्गोंमें ह्रां ह्रीं ह्रूं" इन बीज मन्त्रोंसे अन्तके मंत्र से न्याय करना चाहिये ।२२।

पञ्चोपचारांसंकल्प्य मूलेनाभ्यर्चयेत्त्रिधा ।
केशरेषु च पद्मस्य षडङ्गानि महेश्वरि ।२३
वह्नीशरक्षोवायूनां परितः क्रमतः सुधीः ।
द्वितीयावरणे पूज्याञ्चतस्रो मूर्तय क्रमात् ।२४
पूर्वाद्युत्तरपर्यंतं दशमूलेषु पार्वति ।
आदित्यो भास्करो भानू रविश्चेत्यनुपूर्वश ।२५
अर्को ब्रह्मा तथा रुद्रो विष्णुश्चेति पुनःप्रिये ।
ईशानादिष सपूज्यास्तृतीयावरणे पुनः ।२६
सोमँ कुजं बुधं जीवं कविं मंद तमस्तमः ।
समंततो यजेदेतान्पूर्वादिदलमध्यतः ।२७
अथवा द्वादशादित्यान् द्वितीयावरणे यजेत् ।
तृतीयावरणे चैव राशीन्द्वादश पूजयेत् ।२८

पञ्च उपचार करके संकल्प करे और तीनबार पूजन करनाचाहिये । हे महेश्वरि ! पद्मके केशरोंमें तथा छैअङ्गोंमें यजनकरे ।२३।अग्नि,ईश्वर राक्षस और वायु आदिकी चारोंप्रतिमाओंका दूसरे आवरणमें क्रमसे यजन करनाचाहिए ।२४ हे पार्वति ! पूर्वसे आदि लेकर उत्तरपर्यन्त कमलदलके मूलमें आदित्य,भानु,रवि और भास्करकी क्रमके अनुसार अर्चनाकरे।२५। सूर्य ब्रह्मा, रुद्र और विष्णु तथा ईशानादि का तीसरे आवरण में यजन करना चाहिये ।२६। सोम, मंगल, बुध और महाबुद्धिमान् देवगुरु बृहस्पति तेजस्वी शुक्र, शनैश्चर और महा भीषण राहु तथा केतु का पूर्वादि दलके मध्य से चारों ओर पूजन करे ।२७। अथवा द्वितीय आवरण में बारह आदित्यों का ही यजन करे और तृतीय आवरण में बारह राशियों का पूजन करे ।२८।

सप्तसागरगङ्गाश्च बहिरस्य समंततः ।
ऋषीन्देवांश्च गंधर्वान्पन्नगानप्सरोगणान् ।२९
ग्रामण्यश्च तथा यक्षांयातुधानांस्तथत हयान्।
सप्त छन्दोमयांश्चैव वालखिल्यांश्च पूजयेत् ।३०

एवं त्र्यावरणं देवं समभ्यर्च्य दिवाकरम् ।
विरच्य मंडलं पश्चाच्चतुरस्त्रं समाहितः ।३१
स्थाप्य साधारकं ताम्रपात्रं प्रस्थोदविस्तृतम्।
पूरयित्वा जलैः शुद्धैर्वासितैः कुसुमादिभिः ।३२
अभ्यर्च्य गंधपुष्पाद्यैर्जानुभ्यामवनीं गतः ।
अर्घ्यपात्रं समादाय भ्रूमध्यांतं समुद्धरेत् ।३३
ततो ब्रूयादिमं मंत्रं सावित्रं सर्वसिद्धिदम् ।
शृणु तच्च महादेवि भुक्तिमुक्तिप्रदं सदा ।३४
सिंदूरवर्णाय सुमण्डलाय नमोस्तु वज्राभरणाय तुभ्यम् ।
पद्माभनेत्राय सुपंकजाय ब्रह्मेन्द्रनारायणकारणाय ।३५
सरक्तचूर्णं ससुवर्णतोयं स्त्रक्कुंकुमाढ्यं सकुशं सपुष्पम् ।
प्रदत्तमादाय सहेमपात्रं प्रशस्तमर्घ्यं भगवन्प्रसीद ।३६

सातों समुद्र, भागीरथी गङ्गा, इसके बारह देवता तथा ऋषि, गंधर्व, पन्नग, अप्सराओं के गण, ग्रामीणयक्ष यातुधान सप्तछदमें बालखिल्यऋषियों को लिखकर सबका यजन करे ।३०। इस रीतिसे तीनआवरण वाले दिवाकर देवका यजनकरके पीछे अत्यन्त सावधानीसे चतुरस्र (चौकोर) मण्डल की रचनाकरनी चाहिए ।३१। एकसेर जल आजाने वाले एक ताम्रपात्रकी स्थापनाकरके कुंकुम आदि वस्तुओंसे सुगन्धित कियेहुए जलको उसमें भर देवे ।३२। इसके उपरान्त गन्धाक्षत पुष्पादिसे यजन करके जांघोंके बलपर पृथ्वीपर बैठकर अर्घ्यपात्रको बाहोंके मध्य तक लेजाकर भुक्तिमुक्तिप्रदान करने वाले सूर्यके मन्त्रका उच्चारण करते हुए अर्घ्य देवे ।३३-३४। सिन्दूर के तुल्यवर्ण वाले सुन्दर मण्डलसे सुशोभित, हीरे आदिके आभूषणोंसेभूषण आपको मेरा नमस्कार है। कमलके समान नेत्रवाले पङ्कज भू (ब्रह्मा) इन्द्र और नारायणके भी कारण आपको नमस्कार है ।३५। लाल रङ्गके चूर्ण के समान अति सुन्दर रङ्गका जल, माला, कुंकुम, कुश, पुष्प ये सब हेमपात्र में रख कर मैं आपको अर्घ्य देता हूँ । हे भगवन्! आप मुझ पर प्रसन्न होव ।३६।

एवमुक्त्वा ततो दत्वा तदर्घ्यं सूर्यमूर्तये।
नमस्कुर्यादिमं मंत्रं पठित्वा सुसमाहितः।३७
नमः शिवाय साम्बाय सगणायादिहेतवे।
रुद्राय विष्णवे तुभ्य ब्रह्मणे च त्रिमूर्तये।३८
एवमुक्त्वा मस्कृत्य स्वासने समवस्थितः।
ऋष्यादिकं पुन कृत्वाकर संशोध्य वारिणा।३९
पुनश्च भस्म संमार्य पूर्वोक्तेनैव वर्त्मना।
न्यासजात प्रकुर्वीत शिवभावविवृद्धये।४०
पञ्चोपचारै सपूज्य शिरसा श्रीगुरुं बुधः।
प्रणव श्रीचतुर्थ्यंत नमोऽन्तं प्रणमेत्ततः।४१
पञ्चात्मक बिन्दुयुत पञ्चमस्वरसंयुतम्।
तदेव बिन्दुसहित पञ्चमस्वरवर्जितम्।४२
पञ्चमस्वरसयुक्त मन्त्रीशं च सबिबिन्दुकम्।
उद्धृत्य बिन्दुसहित संवर्तकमथोद्धरेत्।४३

यह करतेहुए सूर्य मूर्ति भगवान् को अर्घ्य देवे और इस अगले मन्त्रको पढ़कर सावधानीकेसाथ नमस्कार करे।३७। जगदम्बा भवानी तथा गणोंके समेत इस समस्त विश्वके आदि कारणभूत भगवान् शिवको नमस्कार है। रुद्र ब्रह्मा, विष्णु और सूर्य स्वरूप आपको सादर नमस्कार है।३८। इस तरहसे कहकर प्रणामकरे और अपने आसनपर संस्थित होकर ऋषि आदि का स्मरण कर जलसे हाथोंको शुद्धकरे।३९। उपर्युक्त विधिसे पुनः भस्म को धारण करना चाहिए और भगवान् शिव की भक्तिके लिए अङ्गन्यास करन्यासादि करनेचाहिए।४०।मतिमान् साधकका कर्त्तव्य है कि नतमस्तक होकर विनम्र भावसे पञ्चापचार द्वारा श्रीगुरुदेवका पूजन करे और श्री' पूर्वमें-चतुर्थी विभक्तिलगाकर अन्तमें 'नमः' योजितकर'ॐ गुरवेनमः' इस तरह अर्चनमें उच्चारणकरता हुआही पूजनकरे ४१। पंचवर्णात्मक बिन्दु-युक्त पंचमस्वर उकारसहित और वहीं विन्दुसमेत पंचमस्वरसेरहित पंचम स्वरके सहित बिन्दु सहित मन्त्रीशका उद्धार करके बिन्दु सहित अकारका उच्चारण करे।४२।

एतैरेवं क्रमाद् बीजैरुद्धृतैः प्रणमेद् बुधः ।
भुजयोरूरुयुग्मे च गुरुं गणपतिं तथा ।४४
दुर्गां च क्षेत्रपालं च बद्धाञ्जलिपुटः स्थितिः ।
ओमस्त्राय फडित्युक्त्वा करौ संशोध्य षट् क्रमात् ।४५
अपसर्पन्त्विति प्रोच्यं प्रणव तदनंतरम् ।
अस्त्राय फडिति प्रोच्य पार्ष्णिघातत्रयेण तु ।४६
उद्धृत्य विघ्नान्भूयिष्ठान् करतालत्रयेण तु ।
अन्तरिक्षगतान्दृष्ट्वा विलोक्य दिवि संस्थितान् ।४७
निरुद्धप्राण आसीनो हंसमंत्रमनुस्मरन् ।
हृदिस्थं जोवचैतन्यं ब्रह्मनाडया समानयेत् ।४८
द्वादशांतः स्थविशदे सहस्रारमहाम्बुजे ।
चिच्चन्द्रमण्डलान्तःस्थं चिद्रूपं परमेश्वरम् ।४९

इस प्रकारसे क्रमशः इन बीजोंका उद्धारकरके क्रमसे भुजा और दोनों जघाओंमें देवोंकाप्रणाम ध्यान करे-भुजामें गुरु और गणपतिको और दोनों ऊरुओंमें दुर्गादेवी और क्षेत्रपालको प्रणामकरे ओर दोनों हाथजोड़कर 'ॐ अस्त्राय फट्' यह उच्चारणकर षडङ्गन्यासकरके अपने हाथोंको छैबार शुद्ध शुद्धकरे ।४४-४५। इसके अनन्तर 'अपसर्पन्तु इत्यादि मन्त्रको पढ़कर फिर प्रणवका उच्चारणकर और 'अस्त्राय फट्' कहकर भूमिमें तीन बार पार्णि-घातकरे ।४६। भूमिमेंसे विघ्नोंका निवारणकरके तीनताली बजाकर अन्त-रिक्षमें जानेवाले विघ्नोंको देखकर तथा स्वर्गके विघ्नोंकोदेखकर उन्हें भी दूरकरे ।४७। प्राण वायुको रोकते हुए स्थितरहकर हंस मन्त्रका उच्चारण करता हुआ हृदयमें स्थित जीव चैतन्यको सुषुम्ना नाड़ीकेद्वारा परमेश्वरसे मिला देवे ।४८। इसके उपरान्त द्वादश कमल हृदय में स्थित परमोज्ज्वल सहस्त्र दलोंसेयुक्त महापद्ममें चिदात्मक चन्द्रमण्डलमें विराजमान चित्स्वरूप परमेश्वर का ध्यान करना चाहिए ।४९।

शीर्षदाहृप्लवान् कुर्याद्रेचकादिक्रमेण तु ।
सषोडशचतुष्षष्टिद्वात्रिंशद्गणनायुतैः ।५०

वाय्वग्निसलिलाद्यैस्तैः स्ववेदाद्यैरनुक्रमात् ।
प्राणानायम्य मूलस्थां कुण्डलीं ब्रह्मरन्ध्रगाम् ।५१
आनीय द्वादशांतःस्थसहस्राराम्बुजोमरे ।
चिच्चन्द्रमण्डलोद्भूतपरमामृतधारया ।५२
संसिक्तायां यनौ भूयः शुद्धदेहः सुभावनः ।
सोऽहमित्यवतीर्यांथ स्वात्मान हृदयाम्बुजे ।५३
आत्मन्यावेश्य चात्मानममृत सृतिधारया ।
प्राणप्रतिष्ठां विधिवत्कुर्यादत्र समाहितः ।५४
एकाग्रमानसो योगी विमृश्यातां च मातृकाम् ।
तुष्टितां प्रणवेनाथ न्यसेद् ब्राह्मे च मातृकाम् ।५५
पुनश्च संयतप्राणः कुर्याद्दृष्टयादिकं बुधः ।
शङ्करं संस्मरंश्चिते संन्यसेच्च विमत्सरः ।५६

अब भूत शुद्धि का प्रकार बतलाया जाता है रेचक आदि के क्रम से शोष और दाह दूरकरके सोलह चौसठ अथवा बत्तीस अपरादि वर्णोंसेवायु अग्नि, जलके क्रमसे अकारादि वर्णवाले अपने वेदके मंत्रोसे सावधान होकर सविधि प्राणायाम करे और ब्रह्म रन्ध्रतक जाने वाली कुण्डलीको जगावे ।५०-५१। फिर जहाँसे चन्द्रमण्डलकी धारानिकलती है वहाँ द्वादश कमल और सहस्त्रकमलमें उसको लेजावे ।५२। उसमें शरीरका स्नानकराकर देह की शुद्धिकरे और अपने हृदयकमलमें वह मैं हूँ-ऐसीभव्य भावनाकरे ।५३। आत्माके द्वाराही आत्माका अमृतीकरण करके ससृमि धारसे विधिके साथ प्राण प्रतिष्ठाकरे और बहुतही सावधानरहे ।५४। इस रीतिसे योगी एकाग्र मनसे अन्तकी मात्राको प्रणवसे सपुटितकर उस पूर्वकथित मात्राको बहि-भागमें स्थित करे ।५५। इसके पश्चात् प्राण और दृष्टि आदि को रोककर अपने चित्तमें भगवान् शङ्करका ध्यान करते हुए मात्सर्यका सर्वथा त्याग करके न्यास करना च हिये ।५६।

प्रणवस्य ऋषिर्ब्रह्मा देवि गायत्रीमीरितम् ।
छन्दोऽत्र देवताहं वै परमात्मा सदाशिव ।५७

अकारो बीजमाख्यातमुकारः शक्तिरुच्यते ।
मकारः कीलक प्रोक्त मोक्षार्थे विनियुज्यते ।५८
अंगुष्ठद्वयमारभ्य तलांतं परिमार्जयेत् ।
ओमित्युक्त्वाथ देवेशि करन्यास समारभेत् ।५९
दक्षहस्तस्थितांगुष्ठं समारभ्य यथाक्रमम् ।
वामहस्तकनिष्ठांतं विन्यत्सेपूर्ववत्क्रमात् ।६०
अकारमप्युकारं च मकारं बिन्दुसंयुतम् ।
नमोऽन्तं प्रोच्य सर्वत्र हृदयादौ न्यसेदथ ।६१
अकारं पूर्वमुद्धृत्य ब्रह्मात्मानमथाचरेत् ।
ङेंतं नमोंतं हृदये विनियुज्यात्तथा पुनः ।६२
उकारं विष्णुसहितं शिरोदेशे प्रविन्यसेत् ।
मकारं रुद्रसहितं शिखायां नु प्रविन्यसेत् ।६३

इसके पश्चात् ऋषि आदिका स्मरण कर उन्हें प्रणामकरे । प्रणवका ब्रह्मा ऋषि, देवी गायत्री छन्द, सदाशिव परमात्मा देवता हैं ।५७। अकार वीज है-उकार शक्ति हे मकार कीलक हैं और मोक्षके लिये इसका प्रयोग किया जाता है ।५८। हे देवि ! दोनों अंगूठेलेकर हथेली तक शुद्धकरफिर 'ओम्'ऐसा उच्चारण करके करन्यास करना चाहिए ।५९। दाहिने हाथके अंगूठेसे प्रारम्भकरके बाँयेहाथकी कनिष्ठिका पर्यन्त दक्षिण हस्तकी तर्जनी आदिका क्रमसे न्यासकरे ।६०। ओंकार-उकार और बिन्दुकेसहित मकार सबके अन्तमें 'नमः -यह योजित हस्तमें करके हृदयमें न्यासकरना चाहिए ।६१। सर्वप्रथम अकारका उद्धारकर ब्रह्म आत्मा उच्चारणकरे । यथा-'अ ब्रह्मात्मने नमः'-इस रीतिसे चतुर्थी विभक्तिके एक बचनके अन्तमें 'नमः' लगाकर हृदयमें न्यासकरे अर्थात् स्पर्शकरे ।६२। उकार वा विष्णुके सहित ध्यानकरके शिरोदेशमें विनियोग करे और रुद्रकेसहित मकारको शिखाके स्थानमें विनियोग करना चाहिए ।६३।

एवमुक्त्वा मुनिर्मंत्री कवचं नेत्रमस्तके ।
विन्यसेद्वदेवेशि सावधानेन चेतसा ।६४

अङ्गवक्त्रकलाभेदात्पञ्च ब्रह्मणि विन्यसेत् ।
शिरोवदनहृद्गुह्यपादेष्वेतानि विन्यसेत् ।६५
ईशानस्य कलाः पञ्च पञ्चस्वेतेषु च क्रमात् ।
ततश्चतुर्षु वक्त्रेषु पुरुषस्य कला अपि ।६६
चतस्रः प्रणिधातव्याः पूर्वादिक्रमयोगतः ।
हृत्कंठांसेषु नाभौ च कुक्षौ पृष्ठे च वक्षसि ।६७
अघोरस्य कलाश्चाष्टौ पूजनीया यथ क्रमम् ।
पश्चात्त्रयोदशकलाः पायुमेढ्रोरुजानुषु ।६८
जङ्घास्फिक्कटिपार्श्वेषु वामदेवस्य भावयेत् ।
सद्यस्यापि कलाश्चाष्टौ नेत्रेषु च यथाक्रमम् ।६९
कीर्तितास्ता कलाश्चैवं पादयोरपि हस्तयो ।
प्राणे शिरसि बाह्वोश्च कल्पयेत्कल्पवित्तमः ।७०

इस तरह 'अ ब्रह्मात्मने नमः' इत्यादिके क्रमसे कहकर कवच आदि का विधान करे । हे देवि ! अस्त्र मंत्रसे नेत्रोंमें सावधानहोकर चित्तलगाकर अङ्ग,मुख,कलाके भेदसे पाँचईश नदिका न्यासकरे । पूर्वोक्त ईशानादिका शिर,वदन हृदय,गुह्य और चरणोंमें न्यासकरना चाहिए ।६४-६५। ईशान की पांच कलाकोक्रमपूर्वक शरीरके पाँचोंस्थानोंमें न्यासकरना चाहिए फिर पूर्व आदि दिशाके योगसे चारोंमुखोंमें पूर्व आदि क्रमसे पुरुषकी चारोंकला स्थितकरे हृदय,कण्ठ,स्कंध,नाभिकोष, पीठ छाती इन स्थानोंसे अघोरकीआठ कला स्थित करे पीछे वायु जानुस्फिक् कूला कमर,पार्श्व भागोंमें वामदेवकी तेरहकलाकी भावनाकरनीचाहिए । सद्योजातकी आठकला यथाक्रम नेत्रोंमें कल्पित करे ।६४-६५-६६ ६७। इन कलाओंकी कल्पना, हाथ, चरण,प्राण शिर और बाहुमें कल्पनाकरे ।६८ से ७०।

अष्टत्रिंशत्कलान्यासमेवं कृत्वा तु सर्वशः ।
पश्चात्प्रणवविद्धीमान्प्रणवन्यासमाचरेत् ।७१
बाहुद्वये कूर्परयोस्तथा च मणिबन्धयौ ।
पार्श्वतोदरजङ्घेषु पादयो पृष्ठतस्तथा ।७२

इत्थ प्रणयविन्यासं कृत्वा न्यासविचक्षणः ।
हंसन्यासं प्रकुर्वीत परमात्मविवोधिनि ॥७३

दोनों बाहु कूर्पर (कुहनी) तथा मणिबन्ध,पार्श्व,उदर,जघा,पाद और पीठपें न्यास करे । इस तरह बुद्धिमान् साधक को अट्ठाईस कलाओं का न्यास करने के पश्चात् प्रणव का ध्यान करना चाहिये । बुद्धिमान् पुरुष को इस रीति से प्रणव न्यास पहिले करके पीछे परमात्मा के बोध कराने वाले इस न्यास को करना चाहिये ।७१-७२-७३।

।। ध्यान, आवाहन अर्घ्य विधान पूर्वक शिवपूजा ।।

स्ववामे चतुरस्रं तु मण्डलं परिकल्पयेत् ।१
औमित्यभ्यर्च्य तस्मिंस्तु शंखमस्त्रोपशोधितम् ।
स्थाप्य साधारक त तु प्रणवेनार्चयेत्ततः ।
आपूर्य शुद्धतोयेन चन्दनादिसुगंधिना ।२
अभ्यर्च्यं गन्धपुष्पाद्यः प्रणवेन च सप्तधा ।
अभिमंत्र्य ततस्तस्मिन्धेनुमुद्रां प्रदर्शयेत् ।३
शखमुद्रां च पुरतश्चतुरस्र प्रकल्पयेत् ।
तदन्तरेऽर्द्ध चन्द्रं च त्रिकोणं च तदन्तरे ।४
षट्कोणं वृत्तमेवेदं मण्डलं परिकल्पयेत् ।
शम्यर्त्य गंधपुष्पाद्यैः प्रणवेनाथ मध्यतः ।५
साधारमर्घ्यपात्रं च स्थात्य गंधादिनार्चयेत् ।
आपूर्य शुद्धतोयेने तस्मिन्पात्रे विनीःक्षिपेत् ।६
कुशाग्रण्यक्षतांश्चैव यवव्रीहितिलानपि ।
आज्यसिद्धार्थपुष्पाणि भसितं च वरानने ।७

श्री ईश्वरने कहा-अपने बांई तरफ चतुरस्त्र (चौकोन) मण्डल की रचना करे और ॐ का इस प्रकार से अर्चन करके शंख अस्त्र से अर्थात् अस्त्रमन्त्र से शोधित करना चाहिये ।१। उसको आधार पर स्थित करके प्रणव से यजन करे और चन्दनादिकी सुगन्ध वाले जलसे पूर्णकरदेवे ।२। प्रणवके द्वारा सातबार गन्धाक्षत पुष्पादिसे पूजन करनाचाहिए इस प्रकार

से अभिमन्त्रित करके उसमें धेनु-मुद्रा बनाकर दिखानी चाहिए ।११। इसके आगे चौकोन शंख मुद्रा की कल्पना करनी चाहिए । उसके अन्तर में अर्ध चन्द्र और उसके अन्तरमें त्रिकोण की कल्पना करे ।४। इसरीतिसे षट्-कोण मण्डलकी रचना करनी चाहिये । औरउसके मध्यमेंही केवलओंकार से गन्धाक्षत पुष्पादि के द्वारा अर्चना करे ।५। इसके पश्चात् उस आधार वाले अर्घ्य पात्रको स्थापित करके गन्धाक्षतादि यजन करे और पवित्र जलसे उसे परिपूर्ण कर देवे ।६। हे वरानने ! कुशका अग्र भाग, अक्षत, यव, व्रीहि, तिल, घृत, श्वेत सरसोंके पुष्प और भस्म उसमें डाले ।७।

सद्योजातादिभिर्मन्त्रैः षडंगैः प्रणवेन च ।
अभ्यर्च्य गन्धपुष्पाद्यैरभिमंत्र्य च वर्मणा ।८
अवगुंठ्यास्त्रमन्त्रेण सरक्षार्थं प्रदर्शयेत् ।
धेनुमुद्रां च तेनैव प्रोक्षयेदस्त्रमन्त्रतः ।९
स्वात्मानं गन्धपुष्पादिपूजोपकरणान्यपि ।
पद्मस्थेशानदिक्पद्मं प्रणवोच्चारपूर्वकम् ।१०
गुर्वासनाय नमः इत्यासनं परिकल्पयेत् ।
गुरोर्मूर्तिं च तत्रैव कल्पयेदुपदेशतः ।११
प्रणवंगुरुभ्योऽन्ते नमःप्रोच्यापि देशिकम् ।
समावाह्य ततो ध्यायेद्दक्षिणाभिमुखं स्थितम् ।१२
सुप्रसन्नमुखं सोम्यं शुद्धस्फटिकनिर्मलम् ।
वरादाभयहस्तं च द्विनेत्रं शिवविग्रहम् ।१३
एवं ध्यात्वा यजेद् गन्धपुष्पादिभिरणुक्रमात्।
पद्मस्य नैर्ऋते पद्मे गणपत्यापनोपरिः ।१४
मूर्तिं प्रकल्प्य तत्रैव गणानां त्वेति मंत्रतः ।
समावाह्य ततो देवं ध्यायेदेकाग्रमानसः ।१५

सद्योजातादि मन्त्र षडङ्ग और प्रणवसे गन्धाक्षत पुष्पादि उपचारोंके द्वारा अभिमन्त्रित करके फिर कवचमन्त्रसे अभिमन्त्रित करना चाहिये ।८। अस्त्र मन्त्रसे संयुक्त कर रक्षा के लिए धेनुमुद्राको उसे दिखाना चाहिये ।

अस्त्र-मन्त्रके द्वाराही धेनुमुद्राका प्रोक्षण करे ।९। अपने आत्मा में गन्धाक्षत पुष्पादि की पूजा सामग्रीमें अस्त्र-मन्त्रके द्वारा प्रोक्षण करे और कमल के ईशान के तरफ की दिशामें कमल में ओंकार के उच्चारण के साथ 'गुरु आसनाय नमः' इस तरह कहते हुए आसनकी कल्पनाकरे और गुरुदेव के उपदेशके अनुसार वहाँ पर श्रीगुरुदेव की प्रतिमा की कल्पना भी करनी चाहिए ।१०। 'प्रणवमुं गुरुभ्यो नमः'–इस रीति से श्री गुरुदेव के प्रति कहकर दक्षिण दिशा के सामने स्थित होकर उनका आवाहन करके ध्यान करना चाहिए ।१२। ध्यान करने का प्रकार बतलाते हैं –सुन्दर एवं प्रसन्न मुख है-स्फटिक मणिके तुल्य अति निर्मल वरदान करने वाले दोनों हाथहैं जो अभयका दान भी साथमें किया करते हैं । दो नेत्रोंसेयुक्तऐसे शिवके शरीर वाले गुरुदेव हैं ।१३। इस उक्त प्रकारसे गुरुदेव का ध्यान करके क्रमशःगन्धाक्षत पुष्पादि उपचारों से उनका अर्चन करे और उस पद्म के नैऋत्य दिशाकी ओर वाले पद्म पर स्थित गणेशके आसन पर 'गणानां त्वा' इत्यादि मन्त्रसे गणपतिकी मूर्ति की कल्पना कर देवता का वहाँ आवाहन करे तथा उनका ध्यान भी करना चाहिए ।१४-१५।

रक्तवर्णं महाकायं सर्वाभरणभूषितम् ।
पाशांकुशेष्टदशनन्दधानङ्करपङ्कजः ।१६
गजानन प्रभुं सर्वविघ्नौघघ्नमुपासितुः ।
एवं ध्यात्वा यजेद् गन्धपुष्पाद्यैरुपचारकैः ।१७
कदलीनारिकेलाम्रफलेक्षुकपूर्वकम् ।
नैवेद्यं च समर्प्याथ नमस्कुर्याद् गजाननम् ।१८
पद्मस्य वायुदिक्पद्म सकल्प्य स्कान्दनासनम्।
स्कन्दमूर्ति प्रकल्प्याथ स्कन्दमावाहयेद् बुधः ।१९
उच्चार्य्य स्कन्दगायत्रीं ध्यायेदथ कुमारकम्।
उद्यदादित्यसंकाशं मयूरवरवाहनम् ।२०
चतुर्भुजमुदारांगं मुकुटादिविभूषितम् ।
वरदाभयहस्तं च शक्तिकुक्कुटधारिणम् ।२१

गणपति का लाल वर्ण है, महान् विशाल शरीर है जो कि समस्त आभरणोंसे युक्त हैं। पाश अंकुश दृष्ट दर्शन कर कमलों में धारण किये हुए हैं। इसतरह सब विघ्नोंकेनाशकरनेवालेअस्त्ररूप प्रभु गणपतिकाध्यान करके फिर उनका षोड़श उपचारोसे विधिवत्पूजनकरनाचाहिए।१६-७। कदलीफल,नूतन वस्तु, नारियल, आम, लड्डू आदि नैवेद्य सादर समर्पित करके श्रीगणेशजीको नमस्कार करे।१८। कमलके वायुकोण के पद्म में स्कन्द का आसनकल्पितकरे उस पर भगवान् स्कन्दकी प्रतिमाकीकल्पना करे, फिर स्कन्दका आवाहन करनाचाहिये।१९। स्कन्द गायत्रीका उच्चारणकर कुमारका आवाहन करे। भगवान् स्कन्द का ध्यान करेजो सूर्य के तुल्त कान्ति वालेहैं, मयूर ऊपर समारूढ़ हैं चार भुजा वाले, उदार शरीर, मुकुटआदि से विभूषितहैं, वर तथा अभयकेदान करने वाले हैं और शक्ति मुकुटके धारण करनेवालेहैं ऐसा ध्यान करेऔर गन्धाक्षत पुष्पादिसे सविधि अर्चनकरे। इसके पश्चात् पूर्वद्वारमेंस्थित अन्तःपुरके अधिप साक्षात् नंदीश्वरकोपूजाकरे जो कि सुवर्णतुल्य समस्त आभूषणोंसेविभूषितहै।२०-२१।

एवं ध्यात्वाऽथ गधाद्यैरुपचारैरनुक्रमात् ।
संपूज्य पूर्वद्वारस्य दक्षशाखामुपाश्रितम् ।२२
अन्तःपुराधिपं साक्षान्नन्दिनं सम्यगर्चयेत् ।
चामीकराचलप्रख्य सर्वाभरणभूषितम् ।२३
बालेन्दुमुकुट सोम्यं त्रिनेत्रं च चतुर्भुजम् ।
दीप्तमूलमृजीटंकहेमवेत्रधरं विभुम् ।२४
चद्रबिम्बाभवदन हरिवक्त्रमथापि वा ।
उत्तरस्यां तथातस्य भार्या च मरुतां सुताम् ।२५
सुयशां सुव्रतामम्बपादपण्डनतत्पराम् ।
संपूज्य विधिवद् गन्धपुष्पाद्यैरुपचारकः ।२६
ततः संप्रोक्षयेत्पद्म सास्त्रशंखादबिदुभिः ।
कल्पयेदासन पश्चादाधारादि यथाक्रमम् ।२७
आधारशक्ति कल्याणीं श्यामध्यायेदधोभुवि ।
तस्याः पुरस्तादुत्कठमनन्तं कुंडलाकृतिम् ।२८

नन्दीश्वर बालचन्द्र का मुकुट धारन करने वाले, सौम्य मूर्ति, तीन नेत्र और चार भुजाये धारण करने वाले अतिशय दीप्तिसे युक्त हैं। शूल, मृगी, टंक और सुवर्णके नेत्र धारण करनेवालेहैं तथा सर्वज्ञ हैं। नन्दीश्वर चन्द्रमण्डल एव सिहकेसमान मुखवाले हैं। ऐसेनन्दीश्वरका पूजनकरे।२४। २५। उत्तर की ओर मरुतों की कन्या उनकी मार्या सुयशा नाम की है जो शोभन व्रत वाली पार्वतीके चरणकमलों में तत्परहो चन्दन पुष्पादि अनेक उपचारों से यजन करे।२६। इसके उपरान्त उसकमल को अस्त्र मन्त्रके सहित शंखके जलकी विन्दुओं से प्रोक्षणकरे और इसके पश्चात् आधारादि आसन की कल्पना करनी चाहिये।२७। आधार शक्ति श्याम स्वरूप कल्याणरूपकी नीचे भूमि में ध्यान करना चाहिये उसके आगे ऊर्ध्व कण्ठमें कुण्डलाकार सुशोभित भगवान् अनन्तका ध्यान करे।२८।

धवल पंचफणिन लेलिहानमिवाम्बरम् ।
तस्योपर्यासनं भद्रं कंठीरवचतुष्पदम् ।२९
धर्मो ज्ञान च वैराग्यश्चर्यं च पदानि वै ।
आग्नेयादिश्वेतपीतरक्तश्यामानि वर्णतः ।३०
अधर्मादीनि पूर्वादीन्युत्तरांतान्यनुक्रमात् ।
राजादर्तमणिप्रख्यान्यस्य गात्राणि भावयेत् ।३१
अधोर्ध्वच्छदनं पश्चात्कंदं नाल च कण्ठवान् ।
दलादिकं कर्णिकाश्च विभाव्य क्रमशोऽचयेत्।३२
दलेषु सिद्धयश्चाष्टौ केसरेषु च शक्तिकाः ।
रुद्रां वामादयस्त्वष्टौ पूर्वादिपरितः क्रमात् ।३३
कर्णिकायां च वैराग्यं बीजेषु नव शक्तयः ।
वामाद्या एव पूर्वादि तदन्ते च मनोन्मनी ।३४

अनन्तदेव का श्वेत वर्ण वाला शरीर है जोकि पाँच फण-मण्डलसे युक्तहै प्रोर आकाश को चाटते हुए हैं। उनके निकटही में सिहके समान आकार वाले, चार चरणोंसे युक्त धर्म, ज्ञान, वैराग्य और ऐश्वर्यकेचरणों को आसन पर कल्पित करें। आग्नेयी आदि दिशा श्वेत, पीत,रक्त श्याम वर्णऔरअधर्मादिकों को पूर्व आदि दिशाके अनुक्रम सेपधारनेऔरराजावर्त

नामकी मणि (एक तरहके उपरत्नका नाम हैं) आदिकी इनके कलेवर में भावनाकरे ।२९ से ३१। इसके पश्चात् नीचे तथा ऊँचे में इनअनन्त का इना रत्न से आच्छादनकी कल्पना करे फिर स्कन्ददेवका नाल कंटक कमल के दल और कर्णिका की भावना करके क्रमशः यजन करना चाहिये ।३२। दलों में सोसिद्धिकी कल्पना करनी चाहिये, केशरों में शक्तिकी कल्पना करे और पूर्वादि दिशाओमें रुद्र तथा नामादि आठ शक्तियोंकी कल्पना करनी चाहिये ।३३। कर्णिकामें वैराग्य और बीजोंमें नवशक्तिकी कल्पना करे वामादि शक्तियों की पर्वादि दिशा में कल्पना करे ।३४।

कन्दे शिवात्मको धर्मो नाले ज्ञानं शिवाश्रयम् ।
कर्णिकोपरि वाह्नेय मण्डलं सौरमैन्दवम् ।३५
आत्मविद्या शिवाख्य चतत्वत्रयमतः परम् ।
सर्वासनोपरि सुखं विचित्रकुसुमोज्ज्वलम् ।३६
परव्योमावकाशाख्यवित्तयाऽतीव भास्वरम् ।
परिकल्प्यासनं मूर्त्तं पुष्पविन्यासपूर्वकम् ।३७
आधारशक्तिमारभ्य शुद्धविद्यासनावधि ।
ऊँथारादिचतुर्थ्यंत नाममँत्रं नमोन्तकम् ।३८
उच्चार्य पूज्येद्विद्वान्सर्वत्रैव विधिक्रमः ।
अङ्गवक्त्रकलाभेदात्पच ब्रह्माणि पूर्ववत् ।३९
यिन्यसेत्क्रमशो मूर्त्तौ तत्तन्मुद्राविचक्षणः ।
आवाहयेततो देवं पुष्पाञ्जलिपुटः स्थितः ।३०
सद्योजातं प्रपद्यामीत्यारभ्यौमन्तमुच्चरन् ।
आधारोत्थितनादं तु द्वादशग्रन्थिभेदतः ।४१
ब्रह्मरंध्रातमुच्चार्य ध्यायेदोंकारगोचरम् ।
शुद्धस्फटिकसंकाश देवं निष्कलमक्षरम् ।४२

इसके पश्चात् मनोन्मनी शक्ति को कन्द में, शिवात्मक धर्म नालमें, शिवाश्रय ज्ञानकर्णिकाके ऊपर आग्नेयमण्डल चन्द्र सूर्यसम्बन्धिका ध्यान करना चाहिये। ५। आत्मविद्याज्ञान शिवब्रह्मादिक तीन तत्वइसमें परे

हैं । समस्तआसनों पर मुखके साथविचित्र उज्जवलपुष्प स्थित करे ।३६। और दहर विद्या से महा उज्जवल आसन मूर्त्तिकी कल्पना कर पुष्प रक्खे ।३७। आधार शक्तिसे आरम्भ करके शुद्धविद्यासे आसन पर्यन्त ओङ्कार सहितचतुर्थी विभक्तिसे अन्तमें "नमः"-यह लगाकरही सर्वत्र यजन करे । ।३८। विद्वान् साधको उचित है किसब स्थानों में विधि विधान के साथ पूजन करना चाहिये अङ्ग, मुख तथा कलाके भेदसेउन ईशान प्रभृति पञ्च ब्रह्मको पूर्वकी भाँति उनकी मूर्त्ति में सस्थित कर मुद्रा दिखावेइसके पश्चात पुष्पोंको अंजलि ग्रहण कराकर देवीका आवाहन करे ।३९-४०। 'सद्यो जात प्रपद्यामि' यहाँसे आरम्म करके शिवोमें वस्तु सदा शिवोम्' यहाँ पर्यंत उच्चारण करे,मूलाधार से उठे हुए नाद बारहचक्रकी ग्रन्थि तोड़कर ब्रह्मरध्रमे उच्चारण कर ओंकार गोचर परमेश्वर का ध्यान ऐसा करना चाहिए किशुद्धस्फटिकमणि के तुल्य हैं, कला से रहित हैं और अक्षर उनका स्वरूप हैं ।४१-४२।

कारणं सर्वलोकानां सर्वलोकमय परम् ।
अन्तर्बहिः स्थितं व्याप्य ह्यणोरल्प महत्तमम् ।४३
भक्तनामप्रयत्नेन दृश्यमीश्वरमव्ययम् ।
ब्रह्मेन्द्रविष्णुरुद्राद्यैरपि देवैरगोचरम् ।४४
वेदसारं च विद्वद्भिरगोचरमिति श्रुतम् ।
आदिमध्यान्तरहित भेषज भवरोगिणाम् ।४५
समाहितेन मनसा ध्यात्वैबं परमेश्वरम् ।
आवाहनं स्थापनं च सन्निरोध निरीक्षणम् ।४६
नमस्कारं च कुर्वीत बद्ध्वा मुद्राःपृथक्पृथक्।
ध्यायेत्सदाशिव साक्षाद्देव सकलनिष्कलम् ।४७
शुद्धस्फटिककसंकाशं प्रसन्नं शीतलद्युतिम् ।
विद्युद्वलयसंकाशं जटामुकटभूषितम् ।४८
शार्दूलचर्मवसनं किंचित्स्मितमुखाम्बुजम् ।
रक्तपद्मदलप्रख्यपाणिपादतलाधरम् ।४९

सर्वलक्षणसम्पन्न सर्वाभरणभूषितम् ।
दिव्यायुधकरैर्युक्तं दिव्यगन्धानुलेपनम् ।३०

परमेश्वरका स्वरूप परम दिव्य है और इन समस्त लोकों के कारण भूत है। समस्त देवोंसे परिपूर्ण रूप वाले हैं। पर अन्तर बाहरसर्वत्र व्याप्त रहने वाले और अणु स्वरूप तथा परम महान् भीहैं।भक्तोंको बिना प्रयत्न कियेही दिखाई देने वाले ईश्वर हैं। उनका स्वरूप विनाश रहित है और ब्रह्मा इन्द्र, विष्णु रुद्र आदि बड़े बड़े देवताओं को भी अगोचर अर्थात् न दिखलाई देने वाले हैं।४३ ४८। परमात्मा का स्वरूप वेदों का सारमय है और पूर्ण विद्वानों के द्वारा प्राप्त होने के योग्य होताहै। उनकास्वरूप ऐसा अद्भुत है जिसमें आदि और अन्त कुछ भी नहीं होता है। परमेश्वर का स्वरूप संसार के रोगियों के रोग निवारण करनेकेलिए भेषजके समान होता है।४५। ऐसे उक्त विलक्षण गुणोंसे युक्त परमात्माका ध्यानअत्यन्त सावधान मनसे करना चाहिय औरफिर उनका आवाहन,स्थापन,सन्निरोध दर्शन कर हाथों को जोड़कर नमस्कार करना चाहिये। पृथक् २ मुद्रायें बाँधे और निष्फल साक्षात् देव शिवका ध्यानकरे।४६-४७। अब भगवान् शिव के ध्यान करनेके लिये उनके अड़तीस कलामय स्वरूपका वर्णनकिया जाताहै जिससे उसी प्रकारका ध्यान किया जा सके। विशुद्धस्फटिक मणि के तुल्य स्वच्छ स्वरूप वाले, परम प्रसन्न रहने वाले,शीतलकांतिसे युक्त बिजली के बलय (कड़ा) के तुल्य और मस्तक पर जट जूटोंके मुकुटजैसा धारण करने वाले शिवका स्वरूप होता है।४८। शार्दूल के चम का वस्त्र ओढ़े हुए हास्यसे युक्त मुख कमल वाले, रक्त कमलके तुल्य हस्तएवं चरण वाले तथा अधरों वाले, समस्त सुलक्षणों से युक्त तथा सम्पूर्ण सुन्दर आभूषणों को धारण करने वाले, श्रेष्ठ औरपरमदिव्य अनेकआयुधोंसे युक्त और दिव्य गन्धलेपको लगाने वाला भगवान् शिवका स्वरूप है।४९-५०।

पञ्चवक्त्रं दशभुजञ्च द्रखण्डशिखामणिम् ।
अस्य पूर्वमुखं सौम्यं बालार्कसदृशप्रभम् ।५१
त्रिलोचनारविन्दाढ्यं बालेन्दुकृतशेखरम् ।
दक्षिणं नीलजीमूतसमानरुचिरप्रभम् ।५२

भ्रुकुटीकुटिलं घोरं रक्तवृत्तत्रिलोचनम् ।
दंष्ट्राकराल दुष्प्रेक्ष्य स्फूरिताधारपल्लवम् ।५३
उत्तरं विद्रुमप्रख्यं नीलालकविभूषितम् ।
सद्विलास त्रिनयनं चन्द्रार्द्ध कृतशेखरम् ।५४
पश्चिमं पूर्णचन्द्राभं लोचनत्रितयोज्ज्वलम् ।
चन्द्रलेखाधरं सौम्यं मंदस्मितमनोहरम् ।५५
अतीवसौम्यमुत्फुल्ललोचनत्रितयोज्ज्वलम् ।५६

भगवान् शिवका स्वरूप पाँच मुख वाला, दश भुजाओं वाला, शिखा-मणिसे चन्द्रकलाको धारण करने और पूर्व दिशाकी ओर रहने वाला मुख परम सौम्य तथा सूर्य की कान्तिके तुल्यकांति वाला है ।५१। भगवान् शिव तीन नेत्र धारणकरनेवाले हैं और कमलके तुल्य शोभासेयुक्तहैं जिनके मस्तक पर सर्वदा बालचन्द्रमा विराजमान रहता है और दक्षिण दिशाकी ओर रहने वाला मुख नील मेघके तुल्यकांति वाला होता है ।५२। भगवान् शिवके स्वरूप का ध्यान ऐसा ही करना चाहिए कि उनकी भृकुटियाँ टेढ़ी रहतीहैं, अतिघोर रक्त नेत्र हैं, बहुत ही भीषण कराल दाढ़े हैं और सर्वदा सृष्टि का संहार करने की मुद्रा में ओठों को फड़काते रहते हैं ।५३। उत्तर की ओर वाला मुख मूँगाकेतुल्यहैं, नीले वर्णवाली अलकें उस मुखके ऊपर शोभायमान हैं, परम सुन्दर विलाससे परिपूर्ण तीन नेत्र धारण करने वाले और मस्तक पर चन्द्रमाका अर्द्ध भाग शोभितहोरहाहै ।५४। भगवान् शिव के पाँच मुख बतलाये गयेहैं उनमें जो मुख पश्चिमदिशाकी ओरहै वह पूर्ण चन्द्र के समान कान्तिसे युक्त होताहैं, वहाँभी उसमुखमें तीन नेत्र विराज-मानहैं और अर्ध चन्द्र शोभा दे रहा है तथा सौम्य एवं मन्द हास्यसे परम मनोहर हैं ।५५। अब शिवके पञ्चम मुखका वर्णन कियाजाता है जिसका ध्यान ऐसा करना चाहिये कि वह स्फटिकके समान उज्ज्वल,चन्द्र रेखा से युक्त, अत्यन्त समुज्ज्वल एवं मनोहर, तीन नेत्र से युक्त है ।५६।

दक्षिणे शूलपरशुवज्रखड्गानलोज्ज्वलम् ।५९

सर्वे पिनाकनाराचघण्टापाशांकुशोज्ज्वलम् ।
निवृत्या ज नुपर्यन्तमानाभि च प्रयिष्ठया ।५८
आकण्ठ विद्यया तद्वदाललाटं तु शान्तया ।
तद्ध्वं शान्त्यतीताख्यकलया परया तथा ।५९
पञ्चाध्वव्यापिनं तस्मात्कलाञ्चकविग्रहम् ।
ईषानमुकुटं देवं पुरुषाख्यं पुरातनम् ।६०
अघोरहृदयं तद्वद्वामगुह्यं महेश्वरम् ।
सद्योजातं च तन्मूर्तिमष्टविंशत्कलामयम् ।६१
मातृकामयमीशान पञ्चब्रह्ममयं तथा ।
ऊँकाराख्यमयं चैव हंसन्यासमयं नथा ६२
पंचाक्षरमयं देवं षडक्षरमयं तथा ।
अगषटूकमयञ्चैव जातिषट्कसमन्वितम् ।६३

दक्षिण भाग में शूल, परशु, वज्र और खग अग्नि के तुल्य उज्ज्वल है और बाँई ओर नाराच,घण्टा पाश औरअंकुशसे अग्नि केसमानउज्ज्वल हैं जो जानुतक निवृत्या नामकला और नाभिमें प्रतिष्ठित नाम की कला से कण्ठ पर्यन्त विद्या तथा ललाट पर्यन्त शान्ता नामबाली कला और इससे भी उपर शान्त्यतीत पराकलासे युक्त तथा पाँच स्थानमें व्यापक होने के कारण निवृत्ति आदि पंच कलामयशरीर है । ईशानदेव मुकुट पुरुष पुरातन मुख है ।५७-५७-६०। अघोर हृदय है, वामदेव गुह्य है, सद्योजात चरण है, इस तरह अड़तीस कलाओं से पूर्ण उसकी मूर्ति है ।५१। ईशान मातृका पूर्णहै तथा पंच ब्रह्ममयहै, ओंकारमय तथा हंसन्यासमयहै ६२।यह देव पञ्चाक्षरमय है तथा षडक्षर है, छै अंकमय और जातिसेयुक्त है।६३।

एवं ध्यात्वाथ मद्वामभागे त्वां च मनोन्मनीम् ।
गौरीमिमाय मन्त्रेण प्रणवा द्येन भक्तितः ।६४
आवाह्य पूर्ववत्कुर्यान्नमस्कारान्तमीश्वरी ।
ध्यायेत्ततस्त्वां देवेशि समाहितमना मुनिः ।६५
प्रफुल्लोत्पलपत्राभां विस्तीर्णायतलोचनाम ।

पूर्णाचन्द्राभवदनां नीलकुंचित्तमूर्द्धजाम् ।६६
नीलोत्पलदलप्रख्यां चन्द्रार्धकृतशेखराम् ।
अतिव्रत्तघनोत्तृंगास्निग्धपीनपयोधराम् ।६७
मनुमध्यां पृथुश्रोणीं पीतरूक्ष्मतराम्बराम् ।
सर्वाभरणसम्पन्नां ललाट तलकोज्ज्वलाम् ।६८
विचित्रपुष्पसंकीर्णकेशपाशोपशोभिताम् ।
सर्वतोऽनुगुणाकारां किञ्चिल्लज्जाननाम् ।६९
हेमारविन्दं विलसद्दधानां दक्षणे करे ।
दण्डवच्चामरं हस्त न्यस्यासीनां सुखासने ।
दण्डवच्चामर हस्तं न्यस्यासीनां सुखासने ।७०

मेरे बाम भागमें आप मनोन्मनी रूप गौरी को लेकर स्थित है, ऐसा ध्यान करना चाहिए और 'गौरीमिमाय'-इस मन्त्र तथा ओंकारके सहित ध्यान करे ।६४। हे ईश्वरि ! आवाहन करके पूर्व की भाँति नमस्कार करना चाहिए।६५। अब ध्यान करने का स्वरूप बतलाया जाता है, विकसित कमलके तुल्य कांतिमे पूर्ण विशाल नेत्रों वाली हैं, पूर्ण चन्द्रमा के समान मुखवाली हैं, नीच वर्ण वाले कुंचित केशोंसे शोभित हैं ।६६। नील वर्णके कमलके दलके समान अर्ध चन्द्रको मस्तकपर धारण करने बाली हैं निस्तीर्ण, घने,ऊँचे और स्निग्धपयोधरोंसे सुशोभित हैं ।६७। सूक्ष्म कटि तट वाली तथा परिपुष्ट श्रोणिभाग वाली, पीत तथा बारीक वस्त्र धारण करने वाली हैं,समस्त आभूषणों को धारण करने वाली हैं तथा मस्तक पर उज्ज्वल तिलक धारण किये हुए हैं ।६८। अद्भुत पुष्पों से सुशोभित केश पाप वाली हैं समस्त सद्गुणों से परिपूर्ण हैं, लज्जा के कारण अपना मुख नीचे की ओर करने वाली है ।६९। अपने दाहिने हाथ में क्रीड़ा के लिये सुवर्ण का कमल लियेहुएहैं और दूसरा हाथ सिंहासनपररक्खे हुए हैं ।७०।

एवं मां त्वां च देवेशि ध्यात्वा नियतमानसः ।
स्नापयेच्छखतोयेन प्रणवप्रोक्षणक्रमात् ।७१
भवे क्तवेनातिभव इति पाद्यं प्रकल्पयेत् ।

वामाय नम इत्युक्त्वा दद्यादाचमनीयकम् ।७२
ज्येष्ठाय नम इत्युक्त्वा शुभ्रवस्त्र प्रकल्पयेत् ।
श्रेष्ठाय नम इत्युक्त्वा दद्याद्यज्ञोपवीतकम् ।७३
रुद्राय नम इत्युक्त्वा पुनराचमनीयकम् ।
कालाय नम इत्युक्त्वा गन्ध दद्यात्सुसंस्कृतम् ।७३
कलविकरणाय नमोऽक्षतं च परिकल्पयेत् ।
बलविकरणाय नम इति पुष्पाणि दापयेत् ।७५
बलाय नम इत्युक्त्वा धूप दद्यात्प्रयत्नतः ।
बलप्रमथनायेति सुदीपं चैव दापयेत् ।७६
ब्रह्मभिश्च षडंगैश्च ततो मातृकया सह ।
प्रणवेन शिवेनैव शक्तियुक्तेन च क्रमात् ।७७
मुद्राः प्रदर्शयेन्मह्यं तुभ्यञ्च वरवर्णिनि ।
मयि प्रकल्पयेत्पूर्वमुपचारांस्ततस्त्वयि ।७८
यदा त्वयि प्रकुर्वीत स्त्रीलिंगं योजयेत्तदा ।
इयानेव हि भेदोऽस्ति नान्यः पार्वति कश्चन ।७९
एवं ध्यानं पूजन च कृत्वा सस्यग्विधानतः ।
ममावरणपूजां च प्रारभेत विचक्षणः ।८०

हे देवि ! इस तरहसे अपना मन लगाकर हमारा और आपका ध्यान किया करताहै तथा शंख के जल से स्नान कराकर ओंकार सेप्रोक्षणकिया करता है वह सिद्ध होता है ।७१। 'भवे भवेनाति भवे'—इसमन्त्रसे पाद्य तथा 'वामदेवाय नमः'—यह उच्चारण करके आचमन देना चाहिये ।७२। 'ज्येष्ठाय नमः' इसको पढ़कर शुभ्र वस्त्र समर्पित करे । 'श्रेष्ठायनमः'-यह पढ़कर यज्ञोपवीत का समर्पण करना चाहिये ।७३। 'रुद्राय नमः'—इसको पढकर आचमन करावे और 'कालात नमः' इसको बोल कर सुन्दर गन्ध को देवे ।७४। 'कक्ष विकरणाय नमः'-यह मन्त्र पढ़कर अक्षत तथा बल-विकरणाय नमः'-यह बोलकर पुष्पों का समर्पण करना चाहिये ।७५। 'बलाय नमः'-यह उच्चारण करधूपका आघ्रापन करावे । बलप्रमथनाय

नमः'-यह पढ़कर दीप दर्शनकरावे ।७६। ब्रह्म षडङ्ग और मात्रा के सहित प्रणव शिव और शक्तिकेसहित क्रमसे मुझे और तुमको मुद्रादिखावे सर्व-प्रथम मेरा पूजनकरे इसकेअनन्तर तुम्हारे पूजनके लिए समस्तवस्तु अर्पित करे ।७७-७८। जिसममय तुम्हारी पूजाकरे तब स्त्री-लिंग लगादेनाचाहिए। केवल इतनाही भेदहोता है अन्यकुछ नहीं है है।७९। हे देवि ! इसीविधिसे पूर्ण विधानकेसाथ ध्यान तथा पूजन करके फिर बुद्धिमान् साधक भक्तको मेरी आवरण पूजाका विधान करना चाहिये ।८०।

। शिव के आठ नामों का अर्थ और लिंग-पूजा विधि ।

शिवो महेश्वरश्चैव रुद्रो विष्णुः पितामहः ।
संसारवैद्यः सर्वज्ञः परमात्मेति मुख्यतः ।१
नामाष्टकमिदं नित्य शिवस्य प्रतिपादकम् ।
आद्यान्तपञ्चकं तत्र शांत्यतीताद्यमुक्रमात् ।२
सज्ञा सदाशिवादीनां पञ्चोपाधिपरिग्रहात् ।
उपाधधिनिवृत्तौ तु यथास्वं विनिवर्तते ।३
पदमेव हितं नित्यमनित्याः पदिनः स्मृताः ।
पदानां परिवृत्तिः स्यांमुच्यंते पदिनो यतः ।४
परिवृत्यन्तरे त्वेवं भूयस्तस्याप्युपाधिना ।
आत्मांतराभिधानं स्यात्पदाद्यनामपञ्चकम् ।५
अन्यतु त्रितयं नाम्नामुपादानादिभेदतः ।
त्रिविधोपाधिरचनाच्छिव एव तु वर्तते ।६
अनादिमलसश्लेषप्रागभावात्स्वभावतः ।
अत्यंतपरिशुद्धा मेत्यतोऽयं शिव उच्यते ।७

ईश्वरने कहा—शिव, महेश्वर, रुद्र, विष्णु, पितामह, संसार वैद्य, सर्वज्ञ, परमात्मा ये मुख्य आठ परमात्मा शिव के नाम हैं, जो शिव के नित्य प्रतिपादक हैं। इसमें पितामह तक प्रथम पाँच नामोंमें शांत्यतीत के क्रमसे पाँच उपाधियों के ग्रहण करने से शिवादि की संज्ञा ग्रहण की है। उपाधि के निवृत्त होने यह संज्ञा भी निवृत्त हो जाती है ।१-२-३। पद

सत्य है और सदाशिवादि मूर्ति अनित्य हैं पदोंका ही विनिमय होता है इससे मूर्ति आदि छूटजाती है।४। पदान्तरकी प्राप्तिमें फिर उपाधिसे उस पदकी प्राप्तिहोती है। जो यह आदिका पञ्चक अन्य आत्माकेजानने वाला होतो दूसरे तीननामोंका इसजगत्के उपादान कारणस्वरूप प्रकृति आदिके योगसे तीनतरहकी उपाधि कहनेके कारण ये तीननाममी शिव रूपही होते हैं।५-६। अनादि मलके सङ्गके स्वभावसे जिस तरह जल स्वच्छ होता है तथा स्वादिष्ट होता है परन्तु वही जल अन्य देशमें प्राप्त हो जानेपर खारी तथा गदला होजाता है परन्तु जलका स्वभावतो निर्मलता युक्त ही होता है। इसीतरह उपाधिरहित होनेसे वह एकही निर्मल शिव है जो उपाधि से युक्तहोनेपर अनेकनाम धारण कर लेते हैं। अब उन नामोंका अर्थ बतलाया जाता है,अत्यन्त परिशुद्ध आत्मा होनेसे महादेवको शिव कहा करते हैं।७

अथवा शेषकल्याणगुणैकघन ईश्वरः ।
शिव इत्युच्यते सद्भिः शेवतष्वार्थवेदिभिः ।८
त्रयाविंशतितत्वेभ्यः पराः प्रकृतिरुच्यते ।
प्रकृतेस्तु परं प्राहुः पुरुषं पञ्चविंशकम् ।९
यद्वेदादौ स्वरं प्राहुर्वाच्यवाचकभावतः ।
वेदैकवेद्यं याथात्म्य द्वेदान्ते च प्रतिष्ठितम् ।१०
स एव प्रकृतो लीना भोक्ता यः प्रकृतेर्यतः ।
तस्य प्रकृतिलीतस्य यः परः स महेश्वरः ।११
तदधानप्रवृत्तित्वात्वकृतेः पुरुषस्य च ।
अथवा त्रिगुणं तत्व मायेयमिदमव्ययम् ।१२
म यां तु प्रकृतैं वित्तान्मायिनं तु महेश्वरम् ।
मायाविमाचकाऽनन्तो महेश्वरसमन्वयात् ।१३
रुद्दुःखं दुःखहेतुर्वा तद्रावयति यः प्रभुः ।
रुद्र इत्युच्यते तस्माच्छिवः परमकारणम् ।१४
यस्माज्जादिदं सर्वं विधिविष्णवेन्द्र पूर्वकतृ ।

अथवा समस्त कल्याणकारी गुणों के एक ही आधार होने के कारण

उन ईश्वरको शिव तत्वके ज्ञाता महात्मा लोग उन्हें शिव कहाकरते हैं ।८। महेश्वर शब्दका अर्थ है तेईस तत्वों से परे प्रकृति है उस प्रकृतिसे भी परे पच्चीसवाँ पुरुष होता है ।९। वाच्य तथा वाचक भाव से जिसको वेदके आदिमें ॐकार कहते है,वह बेदके द्वार ही जानने के योग्य है और आत्म-स्वरूप में वेदान्त में प्रतिष्ठित है ।१०। वह प्रकृति में उसके भोग के लिये लीनरहता है । उस लीन होनेवाले पुरुषसे भी जो परे है वही महेश्वरकहा जाता है ।११। प्रकृति और पुरुष की प्रकृति उसके ही अधीन है अथवा त्रिगुण तत्वकी कभी विनाश को प्राप्त न होने वाली यह माया है ।१२। माया को ही प्रकृति और मायी को महेश्वर जानना चाहिये । महेश्वर को प्राप्तिसे हो नारायण मायासे मोक्षपद प्रदान किया करते है ।१३। रुद्र यह नाम रुद्र अर्थात् दुःखको अथवा दुःखके कारणको दूरकर देने से ही इनको नाम 'रुद्र' यह पड़ गया है और इसीलिये ही इन्हें रुद्र कहा करते है,वही परम कारण शिव है ।१४।

शिवतत्वादिभूम्यन्तं शरीरादि घटादि च ।
व्याव्याधितिष्ठति शिवस्तस्माद्विष्णुरुदाहृत ।१५
जगतः पितृभूतानां शिवो मूर्त्यात्मनामपि ।
पितृभावेन सर्वेषां पितामह उदीरितः ।१६
निदानज्ञो तथा वैद्यो रोगस्य विनिवर्तकः ।
उपायैर्भेषजैस्तद्वल्लयभोगाधिकारक ।१७
संसारस्येश्वरो नित्यं स्थूलस्य विनिवर्त्तक ।
संसारवैद्य इत्युक्तः सर्वतत्वार्थवेदिभिः ।१८
सर्वात्मा परमरेभिर्गुणैर्नित्यसमन्वयात् ।
स्वस्मात्परात्मविरहात्परमात्मा शिवः स्वयम् ।१९
इति स्तुत्वा महादेवं प्रणवात्मानमव्ययम् ।
दत्वा पराङ्मुखाद्यञ्च पश्चादीशानमस्तके ।२०
पुनरभ्यर्च्य देवेशं प्रणवेन समाहितः ।
हस्तेन बद्धाञ्चलिना पूजापुष्पं प्रगृह्य च ।२१

शिवके तत्त्वादि पर्यन्त शरीर घटादि सबमें व्याप्त होकर स्थित होनेके कारणही शिवको विष्णु कहते हैं ।१५। इस समस्त जगत्के पितृस्वरूप ब्रह्मादिक और मूर्ति आत्मावाले होनेसे सबके पितामह वह पितामह कहलाते है ।१६। जिस प्रकार निदानका ज्ञाता वैद्य रोगको निवारण कर देने में समर्थ हुआकरता और उसका उपाय तथा औषधिका ज्ञानरखता है इसी प्रकारसे भोग मोक्षके प्रदान करनेके पूर्ण अधिकार रखनेसे सम्पूर्ण संसार के ईश्वर स्थूल कारणकी निवृत्ति करनेवाले शिवतत्त्वके ज्ञाताओंके द्वारा यह संसार वैद्य-इस नामसे कहे जाया करते है ।१७-१८। वे सर्वज्ञ प्रभृति समस्त गुण गणसे युक्त होकर सबके आत्मा-परे से भी परे आने से और परमात्मा से भी परे होनेसे स्वयंशिव परमात्मा कहे जाते हैं ।१९। इस तरह प्रणवात्म अविनाशी महादेव के लिए प्रणाम करके अपने सन्मुख अर्घ्य देना चाहिए ।२०। फिर ईशानके मस्तकमें प्रणवसेयुक्त देवेशका पूजनकरे और अञ्चलि बाँधकर अर्चाके पुष्पों को करना चाहिये ।२१।

उन्मनांतं शिवं नीत्वावामनासापुटाध्वना ।
दैवीमुद्रास्य च ततो दक्षनासापुटाध्वना ।२२
शिव एवाहमस्मीति तदैक्यमनुभूय च ।
सर्वावरणदेवांश्च पुनरुद्वासयेत् धृदि ।२३
विद्यापूजां गुरोः पूजां कृत्वा पश्चाद्यथाक्रमम् ।
शङ्खधपात्रमंत्रांश्च हृदये विंयसेत्क्रमात् ।२४
निर्माल्यञ्च समाप्याथ चण्डेशायेशगोचरे ।
पुनश्च संयतप्राण ऋष्यादिकमथोच्चरेत् ।२५
एतच्छ्रुत्वा महादेवी महादेवेन भाषितम् ।
स्तुत्वा विविधैः स्तोत्रैर्देवं वेदार्थगर्भितैः ।२६
श्रीमत्पादाब्जयोः पत्युः प्रणामं परमेश्वरी ।
अतिप्रहृष्टहृदया मुमोद मुनिसत्तमाः ।२७
अतिगुह्यमिदं विप्राः प्रचवार्थप्रकाशकम् ।
शिवज्ञानपरं ह्येतद् भवतामार्तिनाशनम् ।२८

फिर वाम नासा पुटके मार्ग में उन्मनी नाड़ी के अन्त तक ले जाकर अर्थात् शिवको लेजाकर और दक्षिण नासा पुट के मार्ग से जगदम्बा देवी को लेजाकर 'मैं स्वयं शिव हूँ,ऐसा अनुभव करे इसके पश्चात् हृदयमें समस्त आवरणके देवताओंका ध्यान करना चाहिए।२२-२३। इसके अनंतर क्रमसे विद्या और गुरुदेवका अर्चन करे फिर शङ्ख, अर्घ्यपात्र तथा अन्य मंत्रों को क्रमसे हृदयमें धारण करना चाहिये २४।इसके पश्चात् निर्माल्यको शिवके अर्थात् चण्डेशके आगे समर्पण करे और पश्चात् प्राणायाम करे तथा समस्त ऋषि आदिका स्मरण करना चाहिए।२५। व्यासजीने कहा–हे देवेशि !इस प्रकार शिवके बचनोंको सुनकर शिवजीके वेदार्थसे भरे हुए अनेक तरह के स्तोत्रोंसे स्तुति करती हुई परमेश्वरी श्रीमच्चरण कमलमें बारम्बार प्रणाम करने लगीं। हे मुनिगण ! परमाह्लाद से मनमें पार्वती महाहर्षित हुई। ।२६-२७। हे ब्राह्मणो ! प्रणव के अर्थ का प्रकाश करने वाला यह परम गुप्त विधान है। यह भगवान् शिवका परम ज्ञान समस्त दुःखोंका विनाश करने वाला होता है।२८।

नान्दी श्राद्ध, ब्रह्मयज्ञादि विधि

साधु साधु महाभाग वामदेव मुनीश्वर।
त्वमतीव शिवे भक्तः शिवज्ञानवतां वरः।१।
त्वया त्वविदितं किंचिन्नास्ति लोकेषु कुत्रचित्।
तथापि तव वक्ष्यामि लोकानुग्रहकारिणः।२।
लोकेस्मिन्पशवः सर्वे नानाशास्त्रविमाहिताः।
वञ्चिताः परमेशस्य माययाऽतिविचित्रया।३।
न जानन्ति परं साक्षात्प्रणवार्थं महेश्वरम्।
सगुण निर्गुणं ब्रह्म त्रिदेवजनक परम्।४।
दक्षिणं बाहुमुद्धृत्य शपथं प्रब्रवीमि ते।
सत्य सत्य पुनः सत्यं सत्यं सत्यं पुनः पुनः।५।
प्रणवार्थः शिवः साक्षात्प्राधान्येन प्रकीर्तितः।
श्रुतिषु स्मृतिशास्त्रेषु पुराणेष्वागमेषु च।६।

यतो वाचो निवर्त्तन्ते प्रप्राप्य मनसा सह।
आनन्द यस्य वै विद्वन्न बिभेति कुतश्चन ।७।

स्कन्दजीने कहा हे वामदेव मुने ! हे महाभाग ! आप धन्य हैं,आप धन्य हैं,आप परम शिवभक्त और शिवज्ञान के ज्ञाताओं में सर्वश्रेष्ठ हैं ।१। त्रैलोक्य कुछभी ऐसा वहीं,जिसे आप जानते हों, फिरभी लोक कल्याणकी दृष्टिसे मैं आपके प्रतिकहता हूँ।२।इस लोक में मनुष्य अनेकभाँतिके शास्त्रों के कारण भ्रमित होगये हैं तथा वे परमेश्वरी की अद्भुत मायासे वंचित हैं ।३। वे साक्षात् प्रणवरूप शिवको नहीं जानते,जो शिव सगुण-निर्गुण ब्रह्म हैं तथा त्रिदेव जिनके द्वारा प्रकट हुए हैं ।४। मैं अपनी दक्षिणभुजा उठाकर सौगन्ध पूर्वक कहता हूँ कि यह नितान्त सत्य है इसमें सन्देह नहीं है ।५। स्वयं भगवान्शङ्कर ने ही प्रणवके अर्थोंका वर्णन किया है,यह बात श्रुति, स्मृति,शास्त्र,पुराण और आगम ग्रन्थोंने भी कही हैं।६। जहाँ पहुँच कर मनयुक्त वाणी की भी निवृत्ति होजाती है, जिनके द्वारा आनन्दको प्राप्त विद्वान् किसी प्रकार भी भयभीत नहीं होता है ।७।

यस्माज्जगदिदं सर्वं विधिविष्णिवन्द्र पूर्वकम् ।
सहभूतेन्द्रियग्रामैः प्रथमं संप्रसूयते ।८।
न सम्प्रसूयते यो वै कुतश्चन कदाचन ।
यस्मिन्न भासते विद्युन्न च सूर्य्यो न चन्द्रमाः ।९
यस्य भासा विभातीदञ्जगत्सर्वं समन्ततः ।
सर्वेश्वर्येण सम्पन्नो नाम्ना सर्वेश्वरः स्वयम् ।१०।
यो वै मुमुक्षुभिर्ध्येयः शम्भुराकाशमध्यगः ।
सर्व्वव्यापी प्रकाशात्मा भासरूपी हि चिन्मयः ।११।
यस्य पुंसां परा शक्तिर्भाविगम्या मनोहरा ।
निर्गुणा स्वगुणैरेव निगूढा निष्कला शिवा ।१२।
तदीयं त्रिविध रूप स्थूलं सूक्ष्मं परं ततः ।
ध्येय मुमुक्षुभिर्नित्यं क्रमतो योगिभिर्मुने ।१३।
निष्कलः सर्वदेवानामादिदेवः सनातनः ।
ज्ञानक्रियास्वभावो यः परमात्मेति गीयते ।१४।

जिससे ब्रह्मा,रुद्र,इन्द्र आदि यह सम्पूर्ण विश्व प्रकट होता है,भूतेन्द्रिय सहित ये ही इस विश्व के उत्पत्तिकर्त्ता हैं ।८। वह कहीं भी उत्पत्तिको प्राप्त नहीं होते,जिनमें विद्युत भास्कर तथा चन्द्रमाभी प्रकाश करने योग्य नहीं हैं ।९। जिसके आभा से ही यह सम्पूर्ण विश्व प्रकाशवान् होता है, सम्पूर्ण ऐश्वर्य उनसे प्राप्त होने से ही वे परमेश्वर कहे जाते हैं ।१०। जो आकाशके मध्य निवास करने वाले शिव मुमुक्षुओं द्वारा ध्यान किये जाते हैं, जो सबमें व्याप्त, प्रकाश रूप आत्मस्वरूप एवं चिन्मय हैं ।११।जिसकी पराशक्ति का ज्ञान ज्ञानसे होता है वह निर्गुण निष्कल, सगुण एवं साक्षात् शिव हैं ।१२। जिनके स्थूल सूक्ष्म और परे यह तीन भेद हैं,हे मुनीश्वर ! मुमुक्षुजनों को उसी का ध्यान करना श्रेयकर है ।१३। यह सभी देवों के अधीश्वर, सनातन, कला-रहित तथा ज्ञान क्रिया के स्वभाव वाले होने से परमात्मा कहे जाते हैं ।१४।

तस्य देवाधिदेवस्य मूर्तिः साक्षात्सदाशिवः ।
पञ्चमन्त्रतनुदेवः कलापञ्चकविग्रहः ।१५।
शुद्धस्फटिकसकाशः प्रसन्नः शीतलद्युतिः ।
पञ्चवक्त्रो दशभुजस्त्रिपञ्चनयनः प्रभुः ।१६।
ईशानमुकुटोपेतः पुरुषास्यः पुरातनः ।
अघोरहृदयो वामदेवगुह्यप्रदेशवान् ।१७।
सद्यपादश्च तन्मूर्तिः साक्षात्सकलनिष्कलः ।
सर्वज्ञत्वादिषट्शक्तिषडंगीकृतविग्रहः ।१८।
शब्दादिशक्तिस्फुरितहृत्पङ्कजविराजितः ।१९।
मन्त्रादिषड्विधार्थानामर्थोपन्यासमार्गतः ।
समष्टिव्यष्टिभावार्थं वक्ष्यामि प्रणवात्मकम् ।२०।
श्रुतिस्मृत्युदितं कर्म कुर्वन्सिद्धिमवाप्स्यति ।
इत्युक्तं परमेशेन वेदमार्गप्रदर्शिना ।२१।

उनकी मूर्ति सदाशिवस्वरूप है,वे पंच मंत्रात्मक देह वाले और पंचक

विग्रह वाले देवता हैं ।१५। स्वच्छ स्फटिक मणि जैसे प्रसन्न और शीतल कान्तिसे सम्पन्न,पञ्चमुख पञ्चदश नयन तथा दश भुजा वाले हैं ।१६। वे मुक्तिसे सुशोभित ईशानदेव,पुरातन पुरुष अघोर हृदय,वामदेव गुह्यभूत तथा मूर्त-स्वरूप हैं ।१७। सद्यपाद तन्मूर्ति, सम्पूर्ण निष्फल मूर्ति.सर्वज्ञत्व आदि छः शक्ति और छः प्रकारसे देहको अङ्गीकृत करने वाले ।१८। अब्द आदि से स्फुरित,हृदय पद्यमें प्रतिष्ठित तथा अपनी शक्तिसे वामभागमें सुशोभित हैं ।१९।अब मैं मन्त्र आदिके छःप्रकार, उपन्यासके ढङ्ग तथा समष्टि-व्यष्टि के प्रणवात्मक अर्थको कहता हूँ, ध्यान से सुनो ।२०। श्रुति, स्मृति द्वारा बताये गये धर्म के द्वारा ही सिद्धि प्राप्त होती है,वेद मार्ग दर्शक ईश्वर का यही कथन है ।२१।

वर्णाश्रमाचारपुण्यैरभ्यर्च्य परमेश्वरम् ।
तत्सायुज्यं गताः सर्वे बहवो मुनिसत्तमाः ।२२।
ब्रह्मचर्येण सुनयो देवा यज्ञक्रियाऽध्वना ।
पितरः प्रजया तृप्ता इति हि श्रुतिब्रवीत् ।२३।
एवं ऋणत्रयान्मुक्तो वानप्रस्थाश्रमं गतः ।
शीतोष्णसुखदुःखादिसहिष्णुर्विजितेन्द्रियः ।२४।
तपस्वी विजिताहारो यमाद्यं योगमभ्यसेत् ।
यथा दृढतरा बुद्धिरविचाल्या भवेत्तथा ।२५।
एव क्रमण शुद्धात्मा सर्वकर्माणि विन्यसेत् ।
संन्यस्य सर्वकर्माणि ज्ञानपूजापरो भवेत् ।२६।
सा हि साक्षाच्छिवैक्येन जीवन्मुक्तिफलप्रदा ।
सर्वोत्तमा हि विज्ञेया निर्विकारा यतात्मनाम् ।७।
तत्प्रकारमहं वक्ष्ये लोकानुग्रहकाम्यया ।
तव स्नेहहान्महाप्राज्ञ सावधानतया शृणु ।२८।

वर्णाश्रमके आचार रूप पुण्यके द्वारा प्रभु-पूजन करने से अनेकों मुनि-जन उनके सायुज्य पदको प्राप्त हो चुके हैं ।२२। श्रुतियों का कथन है कि ब्रह्मचर्यके द्वारा ऋषि,यज्ञ क्रियाके द्वारा देवता और स्वधाके द्वारा पितर